साझा संस्कृति और किशारों का सशक्तीकरण

कु0 जया कश्यप
एम0ए0 (गृह विज्ञान)

सारांश

21वीं सदी में सम्पूर्ण विश्व के युवा नई सोच और तकनीक के साथ आगे बढ़ रहें है। तब हमारे देश के युवा पीछे कैसे रह सकते हैं, उन्हें अन्य विकसित संस्कृतियों और अपने देश की मिश्रित संस्कृति के माध्यम से युवाओं को शिक्षण की व्यवस्था कर न उनको सशक्त और प्रगतिशील भविष्य के युवा तैयार कर सकते हैं। यही नहीं जब उनको समुचित समय में उनके बढ़ते उम्र के साथ उनकी जरूरत के अनुरूप पोषण का भी ध्यान देने की आवश्यकता होती है। क्योंकि स्वस्थ शरीर में ही स्वस्थ मस्तिष्क का विकास होता है। इस उम्र के दौरान माता पिता को किशारों का विशेष ध्यान रखने की आवश्यकता होती है। बच्चों से सहजपूर्ण सवाद करते रहना चाहिये, उनकी आवश्यकताओं व जरूरत की वस्तुओं और खान पान का ध्यान रखते रहना चाहिये। क्योंकि इस उम्र के बच्चे शारीरिक और मानसिक विकास के संक्रमण काल में होते हैं। इसी तरह के संवाद की आवश्यकता कॉलेज में शिक्षक के द्वारा भी की जानी चाहिये। उसे समय–समय पर अच्छे सुझाव और विचारों को रखना चाहिये।

उन्हें मिली–जुली संस्कृतियों के लाभ हानि से भी परिचित कराना चाहिये। इस उम्र के बच्चों को विभिन्न देशों और राज्यों की यात्रा के द्वारा वहाँ की बोली भाषा, पहनावा, खान–पान, ऐतिहासिक और दार्शनिक स्थलों के दिग्दर्शन द्वारा उनमें अपार मानसिक और शारीरिक विकास होता है तथा अपने हमउम्र के साथियों के बीच प्रगाढ़ता भी बढ़ती है। विभिन्न खेलों और योग के माध्यम से भी किशोरों का सर्वांगीण विकास होता है। सरकार को चाहिये कि किशोरों के लिये नयी शिक्षा नीति बनाये जो रोजगार परके साथ–साथ विकास परक भी हो, जिससे वह प्रतियोगी परीक्षाओं में अपना पूर्ण योगदान दे सके और वे अवसाद के शिकार न हो सकें, न ही आपराधिक प्रवृत्ति के हो सकें। क्योंकि देखा यह गया है कि इस उम्र के बच्चों की भावनाओं और आवश्यकताओं के अनुरूप मार्ग दर्शन और सही शिक्षा नहीं मिलती तो किशोरों में हिंसा और उनके प्रति उत्पीड़न की घटनायें होती हैं। इसका फायदा कट्टर पंथी और राजनीतिक पार्टियाँ उठाती हैं। अतः किशोरों में घर–परिवार से ही सभी के प्रति प्रेम तथा समानता का भाव लाने के लिये जागरूक करें। तभी उनको मानसिक और शारीरिक कुपोषण से बचाया जा सकता है, और इस तरह भारत उज्ज्वल भविष्य की ओर अग्रसर होगा।

<u>मुख्य शब्द</u>– संस्कृति, किशोर, E-Generation, Digitalization, सशक्तिकरण,

प्रस्तावना– बहुसंस्कृति को अपनाना युवा वर्ग से ही सम्भव है, किसी भी देश के आर्थिक, सामाजिक, बौद्धिक विकास में शिक्षा का उद्देश्यपरक होना अत्यन्त आवश्यक होता है। जैसे तकनीकी शिक्षा के साथ–साथ टीन एज के बच्चों को उनकी आवश्यकता के अनुरूप ही शिक्षा देनी चाहिए। जिससे युवा वर्ग अपना 100 प्रतिशत योगदान दे सके अन्यथा युवा वर्ग की ऊर्जा की बरबादी होती है।

हमें यदि 21वीं सदी में अन्य विकसित देशों के साथ–साथ कदम से कदम मिलाकर चलना है तो हमारी सरकारों द्वारा युवाओं के उन देशों की बोली, भाषा, खान–पान रहन–सहन और संस्कृति को समझने के लिए यात्रा पर भेजकर उन देशों की संस्कृतियों का आदान प्रदान करना चाहिए तभी उस देश की सभ्यता और संस्कृति दीर्घकालिक अपराजेय और अविनाशी होती है।

भारतीय सभ्यता अजर अमर है क्योंकि भारतीय सभ्यता में एक अद्‌भुत शक्ति है, हिन्दू किसी धर्म या सम्प्रदाय को नहीं कहते, यह भारतीय सभ्यता सनातन इसलिए है, क्योंकि यह विभिन्न धर्मों व सम्प्रदायों एवं बहुसंस्कृतियों का खूबसूरत मिश्रण है। प्राचीन काल से भारत दुनिया की नजर में व्यापार का सबसे बड़ा केन्द्र था यहाँ सारी दुनिया के व्यापारी व्यपार हेतु आते थे जिनकी विभिन्न संस्कृतियाँ, बोली भाषा रीति रिवाज खान–पान और शासन व्यवस्था का आदान प्रदान हुआ करता था इस देश के भी इतिहासकार, वैद्य, दार्शनिक, विद्ववतजन आदि बाहर जाते थे और अपने देश का गौरव बढ़ाते थे। खेलों के माध्यम से और वैश्विक योग से भी किशोरों का सर्वांगीण विकास होता है। वर्तमान में बहुत से देश कुपोषण का शिकार हैं जिसमें दक्षिण अफ्रीका के कई देश तथा एशिया के भी कई देश कुपोषण से ग्रस्त है जिसमें भारत भी शामिल हैं कुपोषण से ग्रस्त देश के किशारों का समुचित विकास नहीं हो सकता। न ही उस देश के किशोर सशक्त हो सकते हे न ही उनका मानसिक और बौद्धिक विकास हो सकता है बौद्धिक विकास बिना आर्थिक प्रगति के सम्भव नहीं हो सकती है, संतुलित पोषण से ही शरीर स्वस्थ होता है यानि स्वस्थ मस्तिष्क होता है, तो स्वस्थ मस्तिष्क में स्वस्थ विचारों का उद्धव होता है जिससे तरह–तरह के रचनात्मक कार्यों को करने की प्रेरणा मिलती है।

तथ्यात्मक विश्लेषण– बहु संस्कृति के माध्यम से हमारे किशोरों तथा युवाओं का भरपूर मानसिक विकास होता है बाह्य आडम्बरों के बजाए हम विश्व कल्याण की बातें करते है वसुधैव कुटुम्बकम के भाव का संचार होता है। हमारा विशाल भारत विभिन्न प्रकार की धर्म और संस्कृतियों का देश है, यह देश अपने आप में एक विश्व की भांति हैं। किशोरों को बेहतर विकास के लिए स्वास्थ्य विभाग और शिक्षा विभाग की महती योगदान की आवश्यकता है, देश के सभी विभागों को संयुक्त कार्य योजना बनाने की आवश्यकता है शिक्षा का उन्मुखीकरण होना जरूरी जिससे किशोर अवस्था के बच्चे बच्चियाँ अपनी बात माता–पिता और अपने शिक्षकों से कह सके। यह एक तरह से स्वास्थ्य एवं प्रगतिशील संस्कृति को और हमारे देश के किशोरों की नई सोच को आगे बढ़ाएगी। आने वाली पीढ़ी अब E-Generation की ओर अग्रसर है, अतः हमारे किशोरों, किशोरियों को, स्वास्थ्य, शिक्षा, सामाजिक चेतना एवं जन जागरण के प्रति सजग रहना होगा और समाज का जागरूक करना पड़ेगा।

वर्तमान काल में जब हर चीजों का वैश्वीकरण हो रहा तो इस स्थिति में हमारे देश के युवाओं और किशारों को भी अपने आप को 21वीं सदी के लिए मानसिक और शारीरिक रूप से सशक्त होना पड़ेगा इस युग में हर चीजों का Digitalization हो रहा है तब और आवश्यक है। हमारा देश दुनिया का सबसे युवा देश है यहाँ युवाओं की और किशोरों की आबादी लगभग 70 प्रतिशत है फिर भी हम अन्य देशों की तुलना में शिक्षा और तकनीक के क्षेत्र में पिछड़ रहे हैं इसका सबसे बड़ा कारण पूर्ववर्ती सरकारों का रहा है क्योंकि वोट के लालच में केवल युवाओं और किशारों का शोषण

ही हुआ कोई भी इसके लिए सरकारी नीति नहीं बनी, जिससे शिक्षण काल में ही अपने किशोरों में और युवाओं को तकनीकी तौर पर भविष्य के लिए तैयार कर सके यही कारण हे कि बेरोजगारी दिनों दिन बढ़ती जा रही है युवाओं और किशोरों में निराशा विशाल रूप ले रही है अपराध एवं आत्महत्याएँ बढ़ रही हैं आगे निकलने की होड़ में हमारे युवा पिछड़ते जा रहे हैं इसका निराकरण तभी सम्भव है जब दुनिया के विकसित और विकासशील देश किशोरों और युवाओं के लिए उनके विकास और उन्नति के लिए उद्देश्य परक शिक्षा तकनीक का देश में निवेश के लिए प्रेरित करे क्योंकि हमारे यहाँ श्रम शक्ति का बाहुल्य है विभिन्न देशों की संस्कृतियों और तकनीकों के आवागमन से किशोरों और युवाओं को नई दिशा और रोजगार के अवसर मिलेंगे। हमारे किशोर और किशोरियाँ आगे चलकर देश के अच्छे और सशक्त नागरिक बन सकेंगे।

विचारात्मक विश्लेषण– संस्कृति हमारे देश के बच्चों के विकास में क्रान्तिकारी परिवर्तन लाएगी। इसके द्वारा किशोरावस्था के बच्चे सबसे ज्यादा हकीकत से रूबरू होगें देखा गया है कि किशोरावस्था बाल्यावस्था के अन्त से प्रारम्भ होती है और प्रकृति और महत्व के कारण किशोरावस्था सब से संवेदनशील अवस्था है क्योंकि इस अवस्था में परिपक्वता की ओर बढ़ता है इस अवस्था की ओर अग्रसर होते बच्चे की कल्पनाएँ अत्यधिक होती हैं जिसे वह साकार करने हतु प्रयास करता रहता है इस दौरान माता–पिता या संस्कार की जिम्मेदारी अत्यधिक बढ़ जाती है हमें मित्रवत व्यवहार बच्चों से करना चाहिए उसकी बात पर शांतिपूर्ण ढंग से विचार करना चाहिए क्योंकि यह अवस्था जीवन का अत्यधिक कठिन समय होता है इस दौरान उसमें शारीरिक और मानसिक तौर पर क्रान्तिकारी परिवर्तन होते हैं इस अवस्था में माता–पिता, शिक्षक और समाज व राष्ट्र का उत्तरदायित्व बढ़ जाता है, कि उनके सही दिशा निर्देश दिया जाए साथ ही साथ किशोरों के सर्वांगीण विकास हेतु सकारात्मक प्रयास करना चाहिए क्योंकि बढ़ते किशोर ही कल का भविष्य है।

कभी–कभी देखा गया है कि उचित शिक्षा न मिलने पर बच्चे गलत रास्ते में चलने लगते हैं जिनकी परिणित दुखद होती है। आज कल आएदिन टीवी चैनलों में बाल अपराध की बाढ़ जैसी आ गयी है यह हमारी गलत शिक्षा नीति और उससे भी अधिक माता पिता द्वारा अपने बच्चों को समय न देना और दूरी बनाए रखना है। क्योंकि यह अवस्था ग्रोइंग काल होती है बच्चों को उनकी रुचिओं एवं इच्छाओं तथा विकास की अच्छी जानकारी लेनी और देनी चाहिए। इस अवस्था में उनमें साझा संस्कृति से किशोरों में तीव्र मानसिक विकास होगा, समायोजन का भी विकास होगा, किशोरावस्था में कल्पना शीलता बढ़ती है अतः सकरात्मक कल्पनाशीलता का विकास होगा इस अवस्था में अत्यधिक काम प्रवृत्ति का विकास होता है क्योंकि Sexual Development अपने चरम पर होता है हमारे देश में बालक बालिकाओं को साथ–साथ रहने और पढ़ने पर भेद किया जाता है अन्य देशों की संस्कृति में ऐसा नहीं है यह संकीर्णता भी खत्म होगी साझा संस्कृति के द्वारा और अन्य लोगों के प्रति आत्मीयता बढ़ेगी नई–नई कला संस्कृति का भी विकास होगा, जो 21वीं सदी के विकास की ओर अग्रसरण होगा जोकि विकासशील भारत के लिए मील का पत्थर साबित होगा। हमारे किशोरों को नई दिशा, व नई रोशनी का आगाज होगा।

उपसंहार– किशोरियों व किशोरों में बढ़ती हिंसा और यौन उत्पीड़न देश के लिए ही नहीं सम्पूर्ण विश्व के लिए गम्भीर समस्या है, जो इसे शारीरिक, मानसिक, यौनाचार और आर्थिक रूप से उसकी

हत्या कर अपंग बना देती है और इस तरह से आपराधिक प्रवृत्ति का जन्म होता है। पुलिस का रवैय्या भी सुधारात्मक न होकर शोषणात्मक व उदासीनता भरा होता है। कुछ नेताओं को लगता है यदि किशोर और किशोरियों को छूट दी गयी तो हमारी संस्कृति अपसंस्कृति में तब्दील हो जायेगी जबकि यह सोच नितान्त ही घटिया और मानसिक संकीर्णता से परिपूर्ण है। आज युवाओं को वोट की राजनीति के चलते उनको सही दिशा देने के बजाए कुमार्ग की ओर चलने को प्रेरित करते हैं और किशोरों का तरह–तरह के प्रलोभन देकर उनको सब्जबाग दिखाते हैं। यदि हमारी आने वाली पीढ़ी अपनी रुचि के अनुरूप शिक्षा ग्रहण करेगी तो वह आर्थिक रूप से स्वावलम्बी बन जायेंगे और अधिक स्वतन्त्रता महसूस करेंगे, पर समाज के कुछ कट्टरपंथी इस साझा संस्कृति के विकास में अवरोधक हैं। आये दिन मीडिया में दलित व मुस्लिम के साथ यदि कोई घटना घटती है तो दो से तीन दिन तक प्रोपोगन्डा चलता है। जबकि ऐसी चीजों को जाति और धर्म से नहीं जोड़ना चाहिए। अपने देश के किशोर किशोरियों में हम घर परिवार से ही सभी के प्रति समानता का भाव लायें और उन्हें जागरूक करें। इसके लिये हमारी प्रभावशाली सामाजिक संस्कृति जवाबदेह है और इसकी रोकथाम कर सकती है। प्रस्तुत लेख में किशोर किशोरियों के लैंगिक असमानता किशोर और किशोरियों में साझा संस्कृति से विकास के लिए विस्तृत व्याख्या की गयी है।

संदर्भ–

1. आहार और पोषण के सिद्धान्त (स्कूलगामी) व किशोरावस्था में पोषण– 'डॉ0 ऊषा टण्डन (मेहरोत्रा)' साहित्य प्रकाशन आगरा, प्रकाशन वर्ष– 1997

2. मानव विकास किशोरावस्था एवं शिक्षा डॉ0 सुधा पाण्डेय साहित्य प्रकाशन, आगरा, प्रकाशन वर्ष– 2007

Changing Roles Of Youth In Post Independent India

Neha Shukla

(Preparing for Research Scholar)

neha060293@gmail.com

Abstract

किसी भी राष्ट्र या समाज का वर्तमान एवं भविष्य उस राष्ट्र की युवा शक्ति के भूत एवं वर्तमान में किये गये प्रयासों पर निर्भर करता है। युवा शक्ति ही सम्बन्धित देश या समाज की रीढ़ होती है तथा ये देश का वर्तमान होने के साथ–साथ भूत एवं भविष्य के सेतु भी होते हैं।

स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात से ही एक विकसित भारत का सपना हर भारतवासी की आँखो में पल रहा है परन्तु भारत अब तक एक विकासशील देश ही है। माना वर्तमान में अनेक देश विकास की दृष्टि से हमसे आगे निकल चुके हैं परन्तु हमारे पास वर्तमान में जो शक्ति है वह बाकी देशों के पास उतनी नही है, और वह है– भारतीय युवा शक्ति।

वर्तमान समय में भारत विश्व में सर्वाधिक युवा जनसंख्या वाला देश है ऐसे में भविष्य में विकास के नये प्रतिमान स्थापित करना काफी हद तक इस बात पर निर्भर है कि हम इस युवा शक्ति का उपयोग किस प्रकार करते हैं। देश का बहुमुखी विकास प्रत्येक युवा के बहुमुखी विकास पर निर्भर करता है और यह विकास प्रत्येक क्षेत्रों शारीरिक, मानसिक, सामाजिक, आर्थिक शैक्षिक आदि में होना चाहिये तथा साथ ही साथ उनसे जुड़ी समस्याओं तथा विकास में बाधक तत्वों को मिटाने करने का हर सम्भव प्रयास किया जाए जिससे प्रत्येक युवा राष्ट्र के प्रति अपनी भूमिका का निर्वाह कर सके तथा अपनी आंखो में पल रहे विकसित भारत के सपने को सकार कर सके।

प्रस्तुत शोध पत्र वर्णनात्मक अध्ययन विधि पर आधारित है जिसके अन्तर्गत द्वितीयक स्त्रोतों के माध्यम से स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात् युवाओं की भूमिका का अध्ययन किया गया है।

प्रस्तावना

1858 से 1947 तक यानि लगभग 200 वर्षों के लम्बे समय के पश्चात् प्रत्येक भारतीय की आँखों मे पल रहे स्वाधीन भारत का सपना अन्ततः साकार हुआ। क्या यह वास्तव मे

थोड़ा भी सरल था, मेरे विचार से तो नही। परन्तु इसे साकार किया प्रत्येक भारतीय, विशेषकर यहाँ के युवाओं; जैसे भगतसिंह, राजगुरु, सुखदेव, मंगल पाण्डे आदि के हृदय में उपस्थिति प्रबल राष्ट्रवाद की भावना तथा उनके द्वारा किये गये अतुलनीय बलिदानों ने। बेशक यह अत्यंत हर्ष का मौका था परन्तु साथ ही साथ नवीन जिम्मेदारियों और चुनौतियों की दस्तक भी।

इसी सदर्भ में जैसा कि अम्बेडकर जी ने कहा था–

" Independence is no doubt a matter of joy. But let us not forget that this independence has thrown on us greater responsibilities. By Independence, we have lost the excuse of blaming the British for anything going wrong. We will have nobody to blame except ourselves there is a greater danger of things going wrong Times are fast changing."

और उपर्युक्त वक्तव्य के अनुरूप ही स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात् देश के समक्ष एक बडी चुनौती सामने थी, और वह थी बिखरी अर्थव्यवस्था, व्यापक निरक्षरता और चौंकाने वाली गरीबी की स्थिति से देश को बाहर निकालकर विकास पथ पर अग्रसर करना। विदित है कि किसी भी समाज या राष्ट्र की प्रगति वहाँ के युवाओं द्वारा हर चुनौती को स्वीकार करते हुये उनके द्वारा विकास की दिशा में किये गये प्रयासों पर निर्भर करती है और वर्तमान भारत की स्थिति इस बात का प्रमाण है कि उपर्युक्त चुनौती को समकालीन युवा वर्ग ने सहर्ष स्वीकार करते हुये एकजुट होकर इस दिशा में अपूर्व योगदान दिया।

- जहाँ स्वतंत्रता के समय भारत की साक्षरता दर 12% थी वही वर्तमान में भारतीय जनगणना 2011 के आकड़ों के अनुसार यह दर बढ़कर 75.06% हो गयी है।
- औपनिवेशिक शासनकाल से अब तक भारत की अर्थव्यवस्था में 2.7 लाख करोड़ से बढकर 57 लाख करोड की बढ़ोत्तरी तथा विदेशी मुद्रा भण्डार 300 बिलियन अमेरिकी देश की आर्थिक प्रगति का प्रमाण है।

- यातायात एवं संचार के क्षेत्र में भी भारत ने तीव्र प्रगति की। वर्ष 1947 में 32 लाइनों समेत कुल 42 अलग–अलग रेलवे प्रणलियाँ, जो कि 33,000 किमी0 तक फैली थी, वाला पुराना रेल नेटवर्क स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात् हमें विरासत में मिला जो 1951 मे ंराष्ट्रीकरण के पश्चात् (जो पहले विभिन्न रियासतो ंके अधिकार मे था) आज 68,312 किमी0 मार्ग, 115,000 किमी0 के ट्रैक तथा 7,112 स्टेशन के साथ भारतीय रेलवे दुनिया के सबसे बड़े रेल नेटवर्क में से एक है।
- जीवन प्रत्याशा 1951 में जहाँ 37 वर्ष थी, 2011 में लगभग दोगुनी होकर 65 साल हो गयी, बाल कुपोषण दर 67% से घटकर 44% हो गयी जो स्वास्थ्य एवं चिकित्सा जगत में हुए विकास का प्रमाण है।
- आर्यभट्ट, मंगल मिशन, ब्रम्होस मिसाइल आदि का सफल आविष्कार वैज्ञानिक क्षेत्र में प्रगति का उदाहरण है।
- भारत में मुख्य व्यवसाय यानि कृषि क्षेत्र में भी अप्रतिम सफलता अर्जित करते हुये भारत दालों का सबसे बड़ा उत्पादक तथा उपभोक्ता चीनी का दूसरा सबसे बड़ा तथा कपास का तीसरा सबसे बड़े उत्पादक राष्ट्र के रूप में विश्व पटल पर अपना नाम अंकित किया।

अन्य क्षेत्रों मे ंभी जैसे– प्रौद्योगिकी, बुनियादी ढ़ाँचा, सेवा क्षेत्र, सामाजिक, राजनीतिक आदि में भी भारत ने अत्यंत उच्च प्रतिमान स्थापित किये, और यह सब परिणाम है देश में युवाओं की लगन एवं कठिन परिश्रम से विकास की दिशा मे किये गये प्रयासों का।

परन्तु इन उपलब्धियों के साथ ही दूसरा पक्ष जो कि अत्यंत महत्वपूर्ण और थोड़ा निराशाजनक भी है, वह यह है कि भारत विकासशील देश की राह पर तय किये लम्बे सफर के पश्चात् भी अब तक विकसित राष्ट्र की श्रेणी में नही आ सका। और वर्तमान परिदृश्य में इस ओर ध्यान देना और भी महत्वपूर्ण हो जाता है, जब कि भारत 65% युवा जनसंख्या के साथ विश्व में सर्वाधिक युवा शक्ति वाला राष्ट्र है।

अतः यह समय की मांग है कि भारत को अग्रिम लक्ष्य शिखर तक पहुँचाने के लिये हम में से प्रत्येक युवा को कर्तव्यबोध तथा राष्ट्र निर्माण में अपने महत्व को स्वीकार करना चाहिये और विकास पथ मे आयी बाधाओं का निदान करते हुये सभी क्षेत्रों आर्थिक, सामजिक, नैतिक, राजनीतिक, शैक्षिक एवं धार्मिक में अपनी भूमिका का निर्वाह करना चाहिये।

इस समय सम्बन्ध में डा0 कलाम जी ने अपनी पुस्तक **'भारत की आवाज'** में युवाओं को संदेश दिया–

''यदि 54 करोड़ युवा इस भावना से काम करें '' मैं यह कर सकता हूँ।, ''हम यह कर सकते है।'' और ''भारत यह कर सकता है।'' तो भारत को विकसित देश बनने से कोई नही रोक सकता।''

अतः प्रत्येक युवा को अग्रिम वर्णित प्रत्येक क्षेत्र मे बढ़–चढ़कर भागीदारी लेनी चाहिये और राष्ट्र को प्रगति पथ पर प्रशस्त करने में सहायक होना चाहिये।

शोध के उद्देश्यः–

स्वतंत्र भारत में युवाओं की बदलती हुयी भूमिका का अध्ययन।

निष्कर्ष परिचर्चा–

आर्थिक क्षेत्र और युवा–

निश्चित रुप से स्वतंत्रता के पश्चात् पिछले सात दशकों में भारत ने आर्थिक क्षेत्र में अविश्वसनीय सफलता प्राप्त की, और आज विश्व पटल में नॉमिनल GDP के अनुसार छठवीं तथा PPP (Purchasing Power Parity) के अनुसार तीसरी सबसे बड़ी अर्थव्यवस्था के रूप में खुद को स्थापित किया। और आने वाले दशकों में विश्व की अर्थव्यवस्था में भारत का हिस्सा वर्तमान 5% से बढ़कर सन् 2040 तक 20.8% हो जाने का अनुमान हैं और यह तभी सम्भव है जब प्रत्येक युवा इस विकास रथ का वाहक बने।

परन्तु मेरे विचार से आज हमारे लिये अपनी उपलब्धियों को गिनाने से कही अधिक महत्वपर्ण यह है कि हम स्वयं से यह प्रश्न करें कि क्या हम अपनी ऊर्जा का सही

दिशा में समुचित उपयोग कर रहे हैं ? अवसर के इंतजार के बजाय स्वयं अवसर उत्पन्न करने पर विश्वास करें।

और ऐसे अनेक जीवंत उदाहरण हमारे सामने हैं भी जिन्होंने विपरीत परिस्थितियों के बावजूद स्वयं को एवं साथ ही साथ देश को नया आयाम दिया। निखित सचान (लेखक एवं ब्लॉगर), अनुष्का शंकर (सितार वादक),राहुल यादव (Housing.com के संस्थापक), आम्रपाली (कत्थक डांसर) साक्षी मलिक (पहलवानी में ओलम्पिक कांस्य पदक विजेता), संदीप माहेश्वरी (Image Bazar के संस्थापक) आदि से युवाओं को उदाहरण लेना चाहिये जिन्होंने अपनी मेहनत, लगन, आत्मविश्वास, और निरन्तर प्रयास से अपने साथ–साथ राष्ट्र का नाम विश्व पटल पर अंकित किया।

अतः आवश्यक है कि हर युवा को अपनी पराजयवादी मनोवृत्ति पर विजय प्राप्त करके अपने सम्पूर्ण व सर्वांगीण विकास का प्रयास करना चाहिये। हम नौकर बनने की बजाय नौकरी देने पर विश्वास करें, लीक से हटकर कुछ भी करने से डरें नही, अपनी रुचि एवं जुनून को अपना कैरियर बनायें।

लोकमान्य तिलक जी के इस कथन से हमें प्ररेणा लेनी चाहिये–

''विश्वास रखें कि स्वयं को मात्र प्रयासों से ही उत्कृष्ट बनाया जा सकता है आप में वह असीम ऊर्जा है जो अनगढ़ पत्थरों से भी राह निकाल सकती है।''

स्वयं से एक प्रश्न अवश्य पूछें कि–

'मै किस तरह स्वयं को याद किया जाना पसन्द करुँगा?' फिर देखियेगा आप में से प्रत्येक एक नई क्रांति को जन्म देंगे और स्वयं तथा राष्ट्र के प्रति अपनी भूमिका का बेहतर निर्वाह कर पाएगें।

युवाओं में नैतिकता तथा राष्ट्रप्रगति–

अब जब बात मूल्यों एवं सदाचार की छिड़ ही गयी है तो काफी समय से दिल और दिमाग मे चल रही कुछ अपेक्षाओं एवं निराशाओं को जाहिर करना चाहूँगी। मै अपनी बात शुरू करती हूँ स्वतंत्रता प्राप्ति के उदाहरण से स्वतंत्रता जैसे महान लक्ष्य को महान

व्यक्तियों ने ही अंजाम दिया और यह व्यक्तित्व की महानता उनमें उपस्थित मूल्यों एवं नैतिकता की भावना में थी जिसने उन्हें कभी पथभ्रष्ट नही होने दिया। नैतिकता एवं सदाचार व्यक्तित्व के वे जरूरी तत्व हैं जिसके बिना एक सफल एवं प्रगतिशील व्यक्ति की, और सफल एवं प्रगतिशील नागरिकों के बिना विकसित राष्ट्र की कल्पना भी बेमानी है।

आज कहीं न कहीं हम युवा अपने मूल्यों, नैतिकता एवं सदाचार को अनदेखा कर देते हैं और स्वयं को आधुनिकता एवं स्वतंत्रता का हवाला देते हुये संतुष्ट करते हैं। हममें से प्रत्येक युवा सम्पूर्ण देश की छवि होता है और जैसा हम खुद को बनाते हैं देश वैसा ही बनता है, देश एवं समाज हमें वातावरण प्रदान करता है और वातावरण हमारे विकास को प्रभावित करता है। स्पष्ट है कि हम जो भी करेंगे वो वापस लौटकर हमें ही प्रभावित करेगा।

मैं एक छोटा सा उदाहरण देती हूँ; खुद का या अपनी जैसी दूसरी लड़कियों का जो घर से बाहर आकर अध्यनरत हैं। हमारे माता–पिता हमें घर से बाहर इतनी तेजी से बदलते हुये समाज में भेजने की हिम्मत इसलिये जुटा पाये क्यों कि उन्होंने कहीं न कहीं प्रेरणात्मक उदाहरण देखे और इसका परिणाम यह हुआ कि हमें अपने जीवन को नया आकार एवं आयाम देने की स्वतंत्रता मिली।

अतः हमारा यह नैतिक कर्तव्य बनता है कि हम ऐसे कार्य करें जो समाज में अन्य लोंगों के लिये प्रेरणा बने न कि निराशा का आधार, और यह तभी सम्भव है जब कि हमारे व्यक्तित्व में मूल्य संस्कार, नैतिकता, सदाचार का स्थान हो और विश्वास रखें ये कभी हमारे विकास पथ में बाधक सिद्ध नही होते अपितु लक्ष्य प्राप्ति हेतु हमें ऊर्जा प्रदान करते हैं।

डा0 कलाम जी ने इस बात को बड़ी खूबसूरती से व्यक्त किया है–

जहाँ हृदय में सदाचार होता है,
चरित्र में सुन्दरता होती है।
जब चरित्र में सुन्दरता होती है,
तो घर में सौहार्द होता है।
जब घर में सौहार्द होता है,

तो राष्ट्र में व्यवस्था होती है।
जब राष्ट्र में व्यवस्था होती है,
तो विश्व में शांति होती है।

शैक्षिक क्षेत्र तथा युवा–व्यापक निरक्षरता से खुद को बाहर निकालकर भारत ने अपनी शिक्षा प्रणाली को वैश्विक स्तर के समतुल्य लाने में काफी हद तक सफलता प्राप्त की, और निःसन्देह लगातार शिक्षा के क्षेत्र में किये जा रहे प्रयास अत्यंत सराहनीय भी है परन्तु मेरे विचार से कहीं न कही भारतीय शिक्षा व्यवस्था अपनी आभा खोती जा रही है।

आज शिक्षा व्यवस्था एक व्यवसाय का रूप चुकी है। साक्षर व्यक्तियों की संख्या मे ंतो वृद्धि हो रही है परन्तु गुणवत्ता में भारी गिरावट देखने को मिल रही है। कई ऐसे उदाहरण हमें देखने को मिलते हैं जब पैसों एवं पहचान के दम पर बड़ी–बड़ी डिग्रियां एवं पद प्रदान किये जाते है और फिर इस प्रकार से लाभान्वित लोग आगे भी भ्रष्टाचार और अनाचार को प्रेरित करते हैं। स्कूलों, कॉलेजों में शिक्षा का गिरता स्तर, शिक्षकों की लापरवाही रोजगार परक शिक्षा का अभाव आदि शिक्षा व्यवस्था को खोखला बनाता जा रहा है। परिणामस्वरूप साक्षर बेरोजगारों की संख्या में वृद्धि दिन–प्रतिदिन होती जा रही है संयुक्त राष्ट्र अर्न्तराष्ट्रीय श्रम संगठन की रिपोर्ट के अनुसार वर्ष 2017 में भारत मे बेरोजगारों की संख्या 1.78 करोंड़ हो चुकी है तथा 2018 में यह बढ़कर 1.8 करोड़ होने की आशंका है जो कि युवाओं में भारी अवसाद और असंतोष का कारण बन रही है।

दूसरी ओर हमारा भी शिक्षा से एकमात्र उद्देश्य नौकरी पाना ही रह गया है। हमें समझना होगा कि शिक्षा एक व्यापक शब्द है यह हमारे व्यक्तित्व के सर्वांगीण विकास तक विस्तृत है न कि सिर्फ कैरियर तक सीमित।

कलाम जी ने अपनी पुस्तक भारत की आवाज में कहा है–

''शिक्षा का अर्थ है जाग्रत समाज की रचना।

जाग्रत समाज के मुख्य अंग तीन हैः एक, ऐसी शिक्षा जिसके निश्चित मूल्य हो; दो, धर्म का आध्यात्मिक शक्ति में परिवर्तन; तीन, आर्थिक विकास।''

मतलब शिक्षा ऐसी होनी चाहिये जो सम्पूर्ण व्यक्तित्व को पुष्पित करने वाली हो, व्यक्ति में मानवीय गरिमा, स्वाभिमान एवं विश्व बंधुत्व में बढ़ोत्तरी करने वाली हो। शिक्षा ऐसी हो जो युवाओं मे यह समझ उत्पन्न कर सके कि वे धर्म को आध्यामिकता से जोड़ सकें न कि अलगाव का आधार बनायें। शिक्षा आर्थिक विकास की बढ़ावा देने वाली होनी चाहिये जो नौकरी ढूढ़ने वालों की अपेक्षा नौकरी देने वाले नागरिक उत्पन्न करें।

और उपर्युक्त सुधार तभी सम्भव हैं जब हममें से प्रत्येक युवा अपनी जिम्मेदारी को समझे, शिक्षा के सही अर्थ को समझे और इस व्यवस्था का अंग बनकर या बाहर रहकर शिक्षा व्यवस्था को फलीभूत करें।

राजनैतिक क्षेत्र एवं युवा–

विश्व के सर्वाधिक विशाल लोकतन्त्र तथा संविधान के साथ भारत एक विशाल शासन एवं राजनीतिक व्यवस्था का प्रवर्तक हैं। इतनी विशाल एवं आदर्श व्यवस्था निःसन्देह अपने आप में एक उच्च सामाजिक आदर्श है।

लेखक जार्ज बर्नाड शॉ के अनुसार, ''प्रजातंत्र एक सामाजिक व्यवस्था है जिसका लक्ष्य सामान्य जनता के सर्वाधिक कल्याण मे निहित है न कि एक वर्ग विशेष के कल्याण में।''

परन्तु भारत जैसे विशाल लोकतंत्र में वर्तमान परिस्थितियां काफी विपरीत हैं। लोकतंत्र के प्रहरी ही राष्ट्रहित के बजाय स्वहित के सिद्धान्त को अनुसरित कर रहे हैं और यही कारण है कि राजनीति का नाम सुनते ही सामान्य जनता एवं युवाओं में आक्रोश का भाव देखने को मिलता है और इसका कारण राजनेताओं में व्याप्त भ्रष्टाचार, राष्ट्रहित से ऊपर स्वहित की भावना, कर्तव्य विमुखता, सत्ता के लिये कुछ भी कर गुजरने की लालसा है। परन्तु इन समस्याओं के लिये जिम्मेदार कहीं न कहीं हम युवा भी हैं।

एक ऐसा विश्व जहाँ जनता की आवाज भगवान की आवाज है तथा जहाँ प्रत्येक व्यक्ति को समानता तथा स्वतंत्रता है , 21 वर्ष के प्रत्येक युवा को अपना शासक चुनने तथा शासक चुने जाने का अधिकार है वहाँ के युवा भ्रष्ट राजनीति एवं राजनेताओं को

अपने विकास मे बाधा बताते अच्छे नही लगते। अगर हम स्वयं के अधिकारों एवं कर्तव्यों के प्रति जागरूक नही रह सकते तो गलती हमारी है।

हर क्षेत्र मे युवाओं की भगीदारी बढ़ती जा रही है तो हम इस क्षेत्र में बढ़ चढ़कर भाग लेने से क्यों कतराते हैं। हममे से प्रत्येक एक बड़ी क्रांति का कर्णधार बन सकता है देरी सिर्फ हमें यह विश्वास करने की हैं। जबाना चौहान ने महज 22 वर्ष की आयु में हिमांचल प्रदेश के मंडी जिले के थरजूण गांव की ग्राम प्रधान बनकर भारत में सबसे युवा प्रधान के रुप में अपना नाम अंकित किया जो हम सभी युवाओं के लिये प्ररेणास्त्रोत हैं और ऐसे अनेक उदाहरण है। अतः हमें चाहिये कि हम धर्म एवं दलगत भावना से ऊपर उठकर सद्चरित्र एवं योग्य प्रतिनिधियों का चयन करें, स्वयं भी राजनीतिक क्षेत्र में अपनी भागीदारी बढ़ायें, अपने लोकतंत्र एवं संविधान की भव्यता का सम्मान करें तथा इसके बारे में ज्यादा से ज्यादा जानें, देश से प्रेम करें और एक अच्छा नागरिक बनकर दिखायें। किसी और को जिम्मेदार ठहराने से पूर्व युवा स्वयं की जिम्मेदारी को समझें। देश के प्रति अपने कर्तव्यों जैसे वोट डालना देश को स्वच्छ रखना, कानून का पालन करना, टैक्स भरना, घूस न लेना आदि का कुशलतापूर्वक पालन करें।

धार्मिक क्षेत्र एवं युवा–

धर्म एक अत्यंत खूबसूरत अवधारणा है जो हमें खूबसूरती से जीवन जीने तथा दूसरों को भी जीने देने की शिक्षा देती है। विश्व का प्रत्येक धर्म शांति, एकता, भाईचारे की स्थापना का संदेश देता है। परन्तु वर्तमान में कुछ चंद लोग धर्म को गलत अर्थों के साथ हमारे समक्ष पेश कर रहे हैं।

धर्म के नाम पर मतभेदों को जन्म दे रहे है। और यह सब उस राष्ट्र में हो रहा हे जो धर्मनिरपेक्षता को मूल सिद्धांत मानता है।

अतः हम युवाओं को धर्म के वास्तविक मर्म को पहचानना चाहिये। धर्म आध्यात्मिकता का दूसरा नाम है, व्यक्ति को पशु से सामाजिक प्राणी में बदलने की शक्ति है, और हमारा पथ प्रदर्शक है न कि अलगाव एवं गुटबंदी का आधार ।

धर्म विकास में बाधक नही अपितु स्वयं के साथ–साथ दूसरों के विकास की प्रेरणा है। अतः हम युवाओं को हर धर्म का सम्मान करते हुये सीमाहीन मस्तिष्क और खुली सोच से नये दृष्टिकोण का विकास करना चाहिये जो राष्ट्र एवं स्वयं के विकास की दिशा में हो।

वर्तमान समाज एवं युवाओं की भूमिकाः–

समाज क्या है? आज के समाज को हम परिभाषित करें तो कैसे ? क्या महज ये व्यक्ति, वर्ग, जाति या धर्म विशेष तक ही सीमित हो गया है? आज समाज को दो परिप्रेक्ष्य से देखा जा रहा है –अच्छा समाज और बुरा समाज। परन्तु समाज अच्छा या बुरा नही होता यह तो महज प्रतिबिंत होता है तत्कालीन युवाओं के द्वारा निष्पादित कार्यों के परिणामों का।

वर्तमान समय में अनेक सामाजिक समस्यायें समाज के स्वरूप को बिगाड़ रही हैं। बढता हुआ भ्रष्टाचार, बलात्कार, हत्या, कर्तव्यहीनता, बेरोजगारी, निर्धनता, छेड़छाड, दहेज आदि हमारे लिये अभिशाप सिद्ध हो रहे है।

परन्तु हर काल में कुछ न कुछ सामाजिक समस्यायें तो जन्म लेती ही हैं और उनका निवारण भी किया जाता है जो कि समकालीन युवाओं के प्रयासों का परिणाम होता है।

अतः युवाओं को आदर्श समाज की स्थापना हेतु स्वयं आदर्श पेश करना होगा। वास्तव में समाज लोगों का, लोगों के द्वारा, लोगों के लिये बनाया गया तंत्र हैं अतः हमारे द्वारा किया गया प्रत्येक कार्य समाज में परिवर्तन के लिये किया गया प्रयास हैं अतः आज इन समस्याओं को पकड़कर रोने के बजाय हमारा यह कर्तव्य बनता है कि आगे बढ़कर इनके निदान के ठोस कदम उठायें। समाजवाद एवं राष्ट्रवाद की भावना से ओत–प्रोत होकर एक मजबूत सशक्त एवं अनुशासित समाज का निर्माण करें समाज में व्याप्त कुरीतियों को खत्म करने के लिये हर व्यक्ति हर युवा को अपने भीतर सदगुणों का विकास करना चाहिये। क्यों कि जब हम सुधरेंगे तभी समाज सुधरेगा।

निष्कर्ष–

मानती हूँ वर्तमान परिस्थितियाँ पूर्णरूपेण हमारे अनुकूल नहीं, और इतिहास गवाह है कि कभी परिस्थितियाँ पूर्णरुपेण अनुकूल नही होती, परन्तु ऐसा तो नहीं हुआ न कि हमारे कदम कहीं रुके। हम हमेशा से विकास पथ पर आगे बढ़ते रहे हैं। और देश के विकास में बढ़–चढ़कर योगदान भी दिया।

परन्तु आज क्या वाकई परिस्थितियाँ ऐसी है, कि हम चाहकर भी कुछ नही कर पा रहे ? मेरे विचार से तो नहीं। हम सिर्फ अपने से अगले को देख रहे कि वो क्या कर रहा है? या अगला क्या नही कर रहा? हम ही क्यों करें? और हाँ जब बात स्वहित की होती है तब तो हम अपने कर्मों का निर्धारण अपने से अगले के कर्मो के अनुसार नही करते, तो ऐसा सिर्फ राष्ट्रहित के कर्तव्यों के वक्त ही क्यों ?

इसके लिये दो कारण जिम्मेदार है– पहला हमारा परिवार। परिवार को किसी भी बालक की प्रथम पाठशाला कहा जाता है और बालक ही युवा होता है। जैसे प्रारम्भिक बीच उसके दिमाग में डाले जाते है, वह जीवन मे उन्हीं के अनुसार प्राथमिकताओं का निर्धारण करता है। गलती कहाँ हो जाती है फिर ? बताती हूँ – आज कल माता–पिता भी बच्चों को सिर्फ पढ़ाई करने की शिक्षा देते हैं वे अपने बच्चों को इससे इतर कुछ भी करते है तो उन्हे रोक देते है और अक्सर उन्हें यहाँ तक बोलते हुए सुना जाता है कि ''समाज सेवा से कुछ न होगा'' ''तुम्हारे अकेले करने से क्या हो जाएगा।'' ''जब तुम्हारे पास कुछ नहीं होगा तो कोई तुम्हें याद नही करेगा।'' ''अगलें ने तुम्हारे लिये क्या कर दिया।''

ऐसे जुमलों से धीरे–धीरे बालक में व्यक्तिवादी प्रवृत्ति जन्म ले लेती है और वह ताजिन्दगी उसी प्रकार प्राथमिकताएँ बनाता है कर्म करता है और तो और स्वयं भी वैसी ही शिक्षा अपने बच्चों को देता है और दूसरे हम–हमारी प्रवृत्ति ही दूसरों पर और परिस्थितियों पर ठीकरा फोड़ने की हो गयी है। क्या हमें अपने एक अकेले के प्रयास की शक्ति का महत्व नही पता? पहले कोई एक हाथ ही ताली बजाता है और सारा वातावरण

ताली की गड़गडहट से गूजने लगाता है। तो हम शुरुआत क्यों नही करते? हम दूसरों का इंतजार क्यों करते हैं स्वयं मे बदलाव की बाते क्यों नही?

अर्नेस्ट हेमिंग्वे ने अपनी पुस्तक द ओल्ड मैन एण्ड द सी मे ंकहा है –

''कामयाबी के लिये जरूरी नही आप दूसरों को कितना बदल पाते हैं। जरूरी यह है कि बदलावों के प्रति आपकी क्या प्रतिक्रिया रहती है।''

अतः हमें प्रत्येक क्षेत्र में अपनी भागीदारी को बढ़ाते हुये जागरूकता के साथ कर्म करने चाहिये। हम स्वयं नेतृत्व करने की क्षमता रखते हैं अपना भी और साथ ही साथ राष्ट्र का भी, तो फिर कोई परिस्थिति या कोई अपनी स्वार्थ सिद्धि से प्रेरित व्यक्ति हमें अच्छे कर्मों को करने से कैसे रोक सकता है।

हम सबको कुछ भी करने के पहले उसके सकारात्मक एवं नकारात्मक दोनों पक्षों पर ध्यान देना चाहिये। कोई भी निर्णय लेने से पूर्व यह जरुर सोचना चाहिये कि हम ये क्यों कर रहें हैं और इसका स्वयं के साथ–साथ राष्ट्र पर क्या प्रभाव पड़ेगा। इससे हम अनर्थक प्रयासों और नकारात्मकता से खुद को दूर रख पाएंगे।

हमें अपने ज्ञान को बढ़ाना होना, खुद पर विश्वास करना सीखना होगा, सीमाहीन मस्तिष्क का स्वामी बनना होगा। हम एक लक्ष्य पूर्ण जीवन के लिये कठिन परिश्रम करें, और अपने रास्ते में अडिग रहें, जब कोई समस्या उत्पन्न हो, तो उसे खुद पर हावी होने न दें, बल्कि समस्याओं को नियंत्रित करें और उन पर विजय प्राप्त करें।

डा0 कलाम भी कहते हैं–

''सपने देखो मेहनत करो और लगे रहो।
आपके जीवन में उद्देश्य अवश्य होनाचाहिये।उसे प्राप्त करने के लिये कड़ी मेहनत करो कार्य करते हुये आपके मार्ग मे समस्यायें भी अवश्य आएंगी लेकिन साहस से उनका सामना करो और सफलता प्राप्त करो। यदि ईश्वर हमारे साथ है तो हमें कौन रोक है।''

सन्दर्भ–ग्रंथ सूची

भारत की आवाज–डा0 ए0पी0जे0 अब्दुल कलाम

अदम्य साहय– डा0 ए0पी0जे0 अब्दुल कलाम

m.jageranjosh.com

hindi: mapsofindia.com

प्रतियोगिता साहित्य मासिक पत्रिका

wikipedia

http//indiatvnews.com

संगीत चिकित्सा : शारीरिक व मानसिक तनाव के परिप्रेक्ष्य में

प्रस्तोत्री
डॉ0 प्रतिमा गुप्ता
असि0 प्रोफेसर–संगीत गायन
डॉ0 भीमराव अम्बेडकर राजकीय
महिला स्नात0 महाविद्यालय
फतेहपुर
Email Id- pratimagupta09@rediffmail.com

सारांश

संगीत का मानव जीवन के साथ केवल भावात्मक, मंनोरंजनात्मक एवं आध्यात्मिक रूप तक ही सम्बन्ध सीमित नहीं रहा है। वरन् चिकित्सा के क्षेत्र में भी इसका हस्तक्षेप अतुलनीय है। संगीत चिकित्सा कोई वर्तमान में आविष्कारित चिकित्सा पद्धति नहीं है। संगीत का चिकित्सा के रूप में उपयोग हमारे देश में बहुत प्राचीन काल से प्रयुक्त होता आया है। वर्तमान भौतिकतावादी युग में शारीरिक और मानसिक तनाव दिनों दिन बढ़ता जा रहा है। इन सभी से उबरने में सांगीतिक चिकित्सा की भूमिका चिकित्सकीय उपचार के क्षेत्र में एक मात्र विकल्प के रूप में उभर कर सामने आ रही है। भारत ही नहीं पाश्चात्य देशों में भी इस पद्धति को अपनाया जा रहा है, जिसके कई सफल उदाहरण प्रस्तुत प्रपत्र में दिये जा रहें है।

उद्देश्यः–

सांगीतिक चिकित्सा प्रणाली का कोई भी दुष्परिणाम शरीर पर नहीं होता। इसका प्रभाव सभी आयु वर्ग के मनुष्य पर होता है चाहे व्यक्ति संगीत में संलिप्त हो या न हो। आज के तनाव पूर्ण परिवेश में संगीत चिकित्सा का महत्व बहुत अधिक बढ़ जाता है संगीत चिकित्सा के महत्व को जन–जन तक पहुँचाना एवं उससे लाभ प्राप्त करना ही, इस शोध पत्र को लिखने का उद्देश्य है।

विषय प्रवेशः–

संगीत का चिकित्सा के रूप में उपयोग हमारे देश में बहुत प्राचीन काल से प्रयुक्त होता आया है। संगीत मनुष्य शरीर पर किस प्रकार अपना चिकित्सकीय प्रभाव डालता है इसका विश्लेषण करते हुए वे अपना प्रभाव मनुष्य शरीर में स्थित सप्त कुडलिनी चक्रों पर बताते है। सबसे उपर के चक्र का नाम सहस्त्र दल कमल चक्र है। इस स्थान को अमृत कुण्ड भी कहते है। विद्वानों ने संगीत का इससे गहरा सम्बन्ध बताते हुए लिखा है कि रोगों के अनुसार सुनाया हुआ संगीत मनुष्य की आत्मा प्रसन्न करता है। यही प्रसन्नता मनुष्य को शान्ति प्रदान करती है। अर्थात् मनुष्य शरीर में स्थित त्रिदोष वात, कफ और पित्त मनुष्य द्वारा लिये गए आहार व्यवहार आदि के कारण घटते बढते रहते है एवं जीवन शक्ति उन्हें साम्य बनाये रखती है।लेकिन जब इस जीवन शक्ति का ह्रास होता है तब ये दोष विकृति उत्पन्न कर मनुष्य को रोगी बना देते हैं। संगीत

मनुष्य शरीर में जिस प्रकार उत्तेजना या करुणा आदि रस उत्पन्न करता है उसी प्रकार यह शरीरगत दोषों पर भी अपना प्रभाव डालता है।

शास्त्रों में स्वरों के स्वभाव, स्वरों के रस आदि के साथ–साथ कौन सा स्वर किस प्रकृति को दूर करता है, इसका भी उल्लेख किया गया है स्वरों के स्वभाव रंग तथा दोषों से उत्पन्न रोगों को दूर करता है इसका विश्लेषण करते हुए डॉ0 जैक्सन पार्लॅ ने अपनी पुस्तक संगीत चिकित्सा में लिखा है–

सिद्धा प्रभावती कान्ता सुप्रभा च मनोहरा।
साधयन्ति श्रुति षड्जे प्रजापति मुखोद्गता।

अर्थात्–षड्ज का रंग गुलाबी कमल सा होने के कारण स्वभाव ठंडा और प्रकृति चित्त को प्रसन्न करने वाली है इसलिए यह पित्त के रोगों को दूर करता है। इसी प्रकार सभी स्वरों का वर्णन किया गया हैं।

संगीत चिकित्सा में ताल का बहुत ही महत्वपूर्ण स्थान एवं योगदान है। मानव शरीर में उत्पन्न होने वाले रस के प्रभाव ताल की सहायता से बहुत जल्द बहुत आसानी से प्रभाव डालते हैं। वे मनुष्य जो संगीत को या तो कम समझते है या फिर नहीं समझते उनमें भी रस उत्पन्न किये जा सकते हैं। वैसे तो स्वर भी रस उत्पत्ति में समर्थ हैं लेकिन स्वर के साथ यदि सही ताल का भी प्रयोग किया जाए तो यह रस उत्पत्ति अधिक प्रभावी व आसानी से उत्पन्न हो सकती है। इसीलिए विद्वानों ने संगीत चिकित्सा के दौरान रोगी की स्थिति के अनुकूल ताल के चयन को भी प्राथमिकता दी है।

संगीत द्वारा मनुष्य शरीर में घटित होने वाली यौगिक क्रियाओं को ध्यान में रखते हुए संगीत को समाज का एवं दैनिक दिनचर्या का एक अंग ही बना डाला जैसे संगीत द्वारा ध्यान, प्राणायाम आदि प्रक्रिया स्वतः ही होती है इसी का लाभ लेने के लिए मनुष्य ने सत्संग, भजन, कीर्तन, दैनिक गतिविधियों पर अधिक जोर दिया ताकि मनुष्य इन क्रियाओं के द्वारा निरन्तर स्वास्थ्य लाभ पा सके तथा स्वस्थ बना रहे।

प्राचीन संगीतज्ञों ने संगीत के क्षेत्र में इतनी उपलब्धियाँ हासिल कर ली थीं कि वह प्रत्येक स्वर से उत्पन्न होने वाले रस तथा इन स्वरों के बहुत्व वाले रागों के प्रभाव को भी जानने समझने लगा था तथा अपनी इसी उपलब्धि के आधार पर वह संगीत द्वारा रोगों की चिकित्सा भी करने लगा था। चूकि हमारे राष्ट्र की चिकित्सा पद्धति आयुर्वेद है, अतः प्राचीन संगीतज्ञों एवं विद्वानों ने आयुर्वेद को ही आधार मानकर संगीतिक चिकित्सा प्राणाली की रचना कर डाली। संगीत के द्वारा रोगोपचार के लिए अनुसंधान एवं प्रयोग करने पर काफी हद तक सफलता भी प्राप्त हुई है।

मनुष्य शरीर पर होने वाले सांगीतिक प्रभावों को हम भलीभांति व बड़ी आसानी से जान सकते हैं। चूंकि हम देखते है कि यदि शरीर संगीत में पूर्ण रूप से लीन नहीं भी होता तो भी वह संगीत के प्रति अपनी प्रतिक्रिया अवश्य दर्शाता है जो कि हमें उसके द्वारा की जा रही क्रियाओं के द्वारा ज्ञात होता है जैसे पैरों का थपथपाना, सिर हिलाना, उंगलियों का लयानुसार चलना इस प्रकार हम पातें है कि मांसपेशियों में संकुचन तथा शिथिलन यह प्रक्रिया संगीत के श्रावण से होती है। यथा–

The fool taps in time, the head nods or a fingers moves rhythmically. We may assume that muscular tension and relaxtion are present as a response to music, even where they do not make themselves felt as overt movement.

तात्पर्य यह है कि संगीत में इतनी शक्ति होती है कि मनुष्य को अपनी ओर आकर्षित कर उस पर अपना प्रभाव अवश्य डालता है भले वह मनुष्य पूर्ण रूप से संगीत में लीन न हुआ हो।

संगीत मनुष्य के शरीर पर किस तरह अपना प्रभाव उत्पन्न करता है इस विषय पर कई विद्वानों , वैज्ञानिकों और शरीर शास्त्रियों ने अपने मत दिये है।

पिकस मिरान्डेल के अनुसार संगीत आत्मा तथा शरीर में जोश उत्पन्न करके रोग को ठीक करता है। यथा–

Picus Mirandale stated that music cured illness by moving Spirits to act on the soul and body.

डॉ0 आल्ट शूटर के अनुसार प्रथमतः संगीत के उस भाग द्वारा ग्रहण किया जाता है जो थेलेमस के नाम से जाना जाता है। थेलेमस मस्तिष्क के विशाल भागों में से एक है तथा वह समस्त संवेदनाओं, भावों तथा ललित कला अनुभूतियों का स्थान है। इसी कारण से संगीत एक चिकित्सा तत्व रूप में बहुत महत्वपूर्ण है। थेलेमस को उत्तेजित करके अपने आप उच्च तत्वों के स्थान मस्तिष्क के कार्डेक्स को अपने आप उत्तेजित करता है जो कि विचार तथा तर्क से सम्बद्ध रहता है।

इसलिए संगीत में मानसिक रोगों को दूर करने की अपार शक्ति है। चूंकि यह मस्तिष्क के विचारों को प्रभावित कर मनुष्य का ध्यान केन्द्रित कर देता है। जिससे मानसिक रोग लक्षणों को मस्तिष्क से निकालने में मदद मिलती है।

इसी उद्देश्य से एक नई चिकित्सा प्रणाली का प्रयोग किया जा रहा है जिसका नाम है– शरीर और मन चिकित्सा शास्त्र अर्थात् बाडी माइन्ड मेडिसिन। इस चिकित्सा शास्त्र का उद्देश्य है तनाव तथा तनाव जन्य रोगों पर नियन्त्रण करना।

अपोलो अस्पताल में बाडी माइन्ड मेडिसिन विभाग में **वरिष्ठ परामर्शी डॉ0 के0 के0 अग्रवाल** के अनुसार इस पद्धति के जरिये रोगों पर नियन्त्रण एवं रोकथाम की जा सकती है। प्रसन्नचित्त लोग ऐसे रसायन उत्पन्न करते हैं जो उनकी प्रतिरक्षा प्रणाली को सकारात्मक रूप से प्रभावित करते हैं। इसकी वजह से रोगों की प्रतिरोधक क्षमता बढ़ती है।आज के इस तनाव जन्य जीवन में तनाव एवं उससे होने वाली विभिन्न प्रकार की व्याधियों की रोकथाम के लिए अब यह आवश्यक हो गया है कि चिकित्सा विज्ञानी इलाज के लिए गैरपरम्परागत स्रोतों, संगीत, मंत्र, हँसी को भी पूरक साधन के रूप में प्रयोग करें। यह सामान्य सी जानकारी है कि लोगों को 70 फीसदी बीमारियों का तनाव से सीधा सम्बन्ध है। उच्च रक्तचाप, चिंता, अवसाद, दिल की बीमारी, अल्सर, स्नायु संबन्धी बीमारियों के प्रमुख कारणों में तनाव शामिल है।

आचार्य शारंगदेव ने अपने ग्रन्थ 'संगीत रत्नाकर' के स्वराध्याय में स्वरों की उत्पत्ति का वर्णन करते हुए विभिन्न स्वरों से संबन्धित स्वायु, चक्रों और शारीरिक अंगों का वर्णन विस्तार पूर्वक किया है। **चरक ऋषि** ने मन और शरीर के संबन्ध में ओजस का उल्लेख किया है। सिद्धि स्थान के बारहवें अध्याय में लिखा है–

बाह्यघोषादिना विधिना सिद्ध वस्ति दद्यात्।

यह ओजस भी तंत्रिकीय कार्य– प्रणाली का दूसरा रूप है। तामत मन्वन्तर के सोलहवें द्वापर में **मैंद ऋषि** ने शब्द–कौतूहल नामक ग्रन्थ की रचना की, जिसमें चार हजार श्लोक हैं। उसके प्रथम प्रकरण में रोगी के शब्द से रोग निदान, शाब्दिक औषधि वीणातंची, पणव आदि वाद्य भेषज से ही बनाने और उनको सुनकर रोगनिदान की व्याख्या की गई है।–

संगीत के प्रयोग से शल्य चिकित्सा का में बेहोशी की दवा इत्यादि का अपेक्षित कम प्रयोग होता था। संगीत इन्द्रियों को स्फूर्त बनाता है। इससे मांसपेशियाँ सक्रिय होती हैं। संगीत विशेषज्ञों के अनुसार, संगीत से रोगियों की या, स्वस्थ व्यक्तियों की नाड़ी–गति को असामान्य से सामान्य बनाती हैं, जिससे शरीर स्वस्थ होता है।

संगीत द्वारा चिकित्सा के अन्तर्गत मनोरोगों के चीन में ''इलेक्ट्रो–म्यूजिक पद्धति' अपनाई जा रही है। **पूर्वी जर्मनी के मोजार्ट** की सांगीतिक दुर्बलता के निवारण हेतु तो संगीत बहुत बड़ी दवा ही है।''**रूसी वैज्ञानिक डॉ0 बेखिनिस्की** ने अपने प्रयोग द्वारा सिद्ध किया कि कुछ रागात्मक बन्दिशों द्वारा अनिद्रा दूर की जा सकती हैं।

डॉ0 बी0 चौधरी, वरिष्ठ मनोचिकित्सक अपोलो अस्पताल दिल्ली के अनुसार, संगीत चिकित्सा आत्म–विमोह, गाइनाफ्रेनिया, मम्दबुद्धि अथवा मानसिक विकृति वाले बालक, युवा और सभी आयुवर्ग के रोगियों के लिए उपयोग में लायी जा रही है।

भारत की प्रथम महिला **पुलिस अधिकारी किरण बेदी** ने जेल में प्रतिदिन प्रातः कैदियों को संगीत सुनाकर प्रोत्साहित किया, जिससे उनकी दिनचर्या एवं जीवन शैली में आशातीत एवं आश्चर्यजनक परिवर्तन हुआ।

''संवेगात्मक रूप में अनियत्रिंत और मानसिक दृष्टि से अस्वस्थ बालकों पर संगीत–चिकित्सा का प्रभाव अत्यधिक कारगर साबित हुआ है। ऐसे बालकों को जिनका मस्तिष्क किसी भी शारीरिक और मानसिक क्रिया के करने में अक्षम रहा इन्हें भी इस चिकित्सा में लाभ पहुँचाया जा सकता है।

वैज्ञानिकों एवं चिकित्सकों ने यह प्रमाणित कर दिया है कि 80 प्रतिशत से अधिक बीमारियों का मूल मानसिक कारण ही इसके नियन्त्रण की क्षमता संगीत में है। केवल स्वर और राग ही इसमें सहायक नहीं, अपितु ताल, लय भी इसके सहायक उपकरण हैं, परन्तु इसमें स्वरों का विशेष महत्व है। संगीत चित्त को स्थिरता प्रदान करता है, जिससे व्यक्ति तनाव रहित हो जाता है।इस चिकित्सा पद्धति का सबसे अधिक महत्वपूर्ण पक्ष यह कि इस पद्धति का कोई दुष्परिणाम नहीं हो सकता ।

निष्कर्ष रूप में कहा जाता है कि सभी रोगों के उपचार हेतु संगीत आवश्यक है। संगीत आसपास के सम्पूर्ण परिवेश को प्रभावित करता है। एकाकीपन को दूर करके प्रफुल्लित करने, अन्तर्मुखी बनाने, थकान दूर कर, कार्य क्षमता बढ़ाने और शक्ति–संचार करनें में अधिक उपयोगी सिद्ध हुआ है। संगीत साधकों के पास अतुल्य औषधि का भंडार है, जिसे वह इन रागियों में बांट कर सेवा का लाभ प्राप्त कर सकते है, तथा संगीतज्ञों एवं

संगीत चिकित्सकों ने संगीत के प्रभाव को देखते हुए उसे दैनिक दिनचर्या में अपना कर स्वस्थ रह सकते है।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूचीः–

1. वर्मा डॉ0 सतीश, संगीत चिकित्सा, राधा पबिलकेशन्स पई दिल्ली, पेज न0 179, 295, 298।
2. सिंह लावण्य कीर्ति, संगीत संजीवनी, कनिष्क पब्लिशर्स, डिस्ट्रीब्यूटर्स नई दिल्ली, पेज न0 23, 25।
3. पोडोलस्की एडवर्ड, म्यूजिक फार योर हेल्थ पेज न0 27।
4. श्रीवास्तवहरिशचन्द्र, संगीत निबन्ध संग्रह, संगीत सदन प्रकाशन इलाहाबाद, पेज न0 95, 95।

आधुनिक जीवन शैली में योग का महत्व

डॉ0 लक्ष्मीना भारती
असि0प्रो0, राज0विज्ञान
रा0म0महाविद्यालय, फतेहपुर
Email:lakshminabharati11@gmail.com

सारांश

योग प्राचीन शारीरिक, मानसिक एवं आध्यात्मिक प्रक्रिया है जो भारत में आरम्भ हुई। यह संस्कृत से लिया गया है जिसका अर्थ है 'मिलना अथवा एक होना, जो शरीर एवं चेतना के मिलने का द्योतक है। भारतीय ग्रंथों में योग को प्राचीन विज्ञान कहा गया है, जिसे ऋषियों ने विकसित किया था और शताब्दियों से जिसका अभ्यास किया जाता रहा है। आधुनिक जीवन शैली की बढ़ती चुनौतियों ने मानव स्वास्थ्य को बहुत प्रभावित किया है जिनसे निपटने के लिए योग पद्धति अब न केवल भारत अपितु पूरे विश्व में उपयोग में लायी जाने लगी है और इसे जन–जन तक पहुँचाने में हमारी सरकार भी पीछे नहीं है। इसी उद्देश्य से अंतर्राष्ट्रीय योग दिवस को बड़े उत्साह एवं उमंग के साथ मनाया गया। आज योग ही वह माध्यम है जिससे पूरे विश्व में शांति और सद्भाव को लाया जा सकता है।

मुख्य शब्द

प्राचीन विज्ञान, योग पद्धति, योग दिवस, सांस्कृतिक विरासत, आधुनिक जीवन शैली, औद्योगीकरण, मनोदैहिक रोग, अंतर्निहित शक्तियों, प्राणायाम, शांति और सद्भाव।

उद्देश्य

आज सम्पूर्ण विश्व बहुत तेजी से विकास की सीढ़ियाँ चढ़ रहा है और इस विकास से हमारा भारत देश भी अछूता नहीं है। आज हमने विकास के कई पायदान पार कर लिये हैं जिससे विश्व पटल पर भारत की छवि एक मजबूत देश की बनकर उभरी है, पर ऐसा लगता है कि यह विकास बेमानी सा है, एक तरफ जहाँ हम विकास की दिशा में अग्रसर हैं तो वहीं दूसरी तरह हमारा स्वास्थ्य तमाम शारीरिक एवं मानसिक बीमारियों से जूझ रहा है। जिसे दूर करना अति आवश्यक है। इन तमाम समस्याओं को दूर करने में योग की महत्वपूर्ण भूमिका हो सकती है। इसलिए योग की महत्ता को जन–जन तक पहुँचाना अति आवश्यक है। इस शोधपत्र का उद्देश्य जन–जन को योग से जोड़ना है जिससे एक स्वस्थ एवं निरोगी भारत का निर्माण हो सके।

ऐतिहासिक पृष्ठभूमि

योग प्राचीन शारीरिक, मानसिक एवं आध्यात्मिक प्रक्रिया है, जो भारत में आरम्भ हुई। 'योग' शब्द संस्कृत से लिया गया है जिसका अर्थ है मिलना अथवा एक होना, जो शरीर एवं चेतना के मिलन का द्योतक है। योग हमारी प्राचीन परम्परा का अमूल्य उपहार है। योग में शरीर एवं मस्तिष्क, विचार एवं कार्य एक हो

जाते हैं। यह सर्वांगीण दृष्टिकोण है, जो हमारे स्वास्थ्य एवं सुख की दृष्टि से बहुत मूल्यवान है। योग व्यायाम मात्र नहीं है, यह आत्मा, विश्व एवं प्रकृति के साथ एकीकरण के भाव को प्राप्त करने का तरीका है। ऐसा माना जाता है कि योग का अभ्यास सभ्यता की शुरूआत के साथ ही हुआ। योग को व्यापक रूप से सिन्धु घाटी सभ्यता का एक 'अमर सांस्कृतिक परिणाम माना जाता है और इसने मानवता के आध्यात्मिक और भौतिक उत्थान में अहम योगदान देकर इस बात को साबित भी किया है। अलग–अलग दर्शनों, परम्पराओं, वंशावलियों और योग के गुरु–शिष्य परम्पराओं के कारण योग के अलग–अलग पारम्परिक आश्रमों का उदय हुआ। जैसे–ज्ञान योग, भक्ति योग, कर्मयोग, ध्यान योग, पातंजलयोग, कुंडलिनी योग, हठ योग, मंत्र योग, लय योग, राज योग, जैन योग, बुद्ध योग आदि। प्रत्येक आश्रम के अपने सिद्धान्त और अभ्यास हैं जिनसे योग के उद्देश्यों को हासिल किया जा सकता है।

प्राचीन भारतीय ग्रंथों में योग को प्राचीन विज्ञान कहा गया है जिसे ऋषियों ने किया था। प्राचीन भारतीय ग्रंथों का सन्दर्भ देकर कई वर्षों से योग पर साहित्य तैयार किया गया है जो पूरे विश्व में फैला हुआ है। प्रसिद्ध ऋषि पतंजलि ने योग को परिभाषित करते हुए कहा था, ''योगः चित्त वृत्ति निरोधः'', जिसका अर्थ ''मस्तिष्क में परिवर्तन को रोकना ही योग है।'' भारत में सबसे सम्मानित ग्रंथों जैसे महाभारत और भगवतगीता में योग के विस्तृत प्रसंग हैं। गीता में तीन प्रकार के योग बताए गये हैं–कर्मयोग, भक्तियोग और ज्ञानयोग। यह जीवन जीने की पद्धति है, जिसका उल्लेख 1900 ईसा पूर्व से 1100 ईसा पूर्व के मध्य वेदों में मिलता है।

विषय –वस्तु

21वीं सदी की दहलीज पर आज सम्पूर्ण विश्व विकास की नई ऊँचाइयों को छू रहा है। आज हमने सम्पूर्ण मानव जाति का बहुत विकास किया है, पर विकास की इन ऊँचाइयों ने मानव जाति के समक्ष अनेकों चुनौतियाँ भी ला खड़ी की हैं, उन्हीं में से एक बड़ी चुनौती के रूप में हमारे समक्ष उभर कर आया है–आधुनिक जीवन शैली का मानव स्वास्थ्य पर दुष्प्रभाव। आधुनिक जीवन शैली ने जहाँ हमारे जीवन को आरामदायक बनाया है वहीं हमारे स्वास्थ्य को बिगाड़ा भी है। औद्योगीकरण और भागदौड़ भरी महानगरीय जीवन शैली ने हमारे समक्ष प्रदूषण, तनाव, चिंता आदि जैसी तमाम चुनौतियाँ बढ़ा दी हैं। इनसे निपटते हुए हमारी जीवन शैली प्रभात से लेकर देर रात तक बहुत तेज रफ्तार वाली और यांत्रिक बन चुकी है। रोजमर्रा की जिन्दगी में हमारे खान–पान की आदतें भी स्वस्थ नहीं हैं। डिब्बाबंद भोजन, मदिरा, मादक पदार्थों के सेवन और उचित आराम एवं कसरत के अभाव ने हमें असहिष्णु बना दिया है जिसकी परिणति विविध प्रकार के मनोदैहिक रोगों जैसे मधुमेह, उच्च रक्तचाप, गठिया, पीठ दर्द आदि में हुई है। इन सभी कारणों से मानसिक बीमारियों की तादात बहुत तेजी से बढ़ी है। अब बहुत बड़ी संख्या में लोग अवसाद, स्किजोफ्रीनिया, मदिरा और मादक पदार्थों के इस्तेमाल से संबंधित विकारों से पीड़ित हो रहे हैं।

इन समस्याओं से लड़ने में योग काफी कारगर साबित हो रहा है। योग अपनी सादगी, किफायत और जीवन शैली के साथ ही साथ मनोदैहिक विकारों से निपटने की क्षमता के कारण विश्व में सभी के आकर्षण का केन्द्र बन चुका है। योग शारीरिक भंगिमाओं, श्वसन सम्बंधी आसनों तथा प्राणायाम का मिश्रण है, जो व्यक्ति की अंतर्निहित शक्तियों को संतुलित रूप से निखारता है। अब समाज का प्रत्येक तबका अपने आपको योग से जोड़ रहा है। योग की भूमिका अब केवल सकारात्मक स्वास्थ्य के रक्षण एवं प्रोत्साहन तक ही नहीं अपितु विभिन्न प्रकार की बीमारियों/परिस्थितियों की रोकथाम और उनसे निपटने में भी है। वैज्ञानिकों और अन्य चिकित्सा व्यवसायियों ने तनाव और अन्य मनोदैहिक कारणों से होने वाले विकारों की रोकथाम और उनसे निपटने में यौगिक जीवन के महत्व को समझा है। योग की लोकप्रियता भारत ही नहीं विदेशों तक पहुँच रही है। योग हमारे व्यक्तित्व का सम्पूर्ण एवं संतुलित तरीके से अर्थात् जीवन के शारीरिक, मानसिक, भावात्मक, सामाजिक एवं आध्यात्मिक स्तरों का एक ही समय विकास करता है। इसका नियमित विकास हमारी क्षमता को बढ़ाता है और विश्वास के स्तर को बेहतर बनाता है। यह व्यक्ति को सिखाता है कि क्या करें और क्या न करें (पाँच यम और पाँच नियम)

योग उपचार का बहुत ही सरल तरीका है जो चीर–फाड़ रहित है। यह शरीर और मस्तिष्क का उपचार विभिन्न प्रकार की पद्धतियों जैसे आसनों, प्राणायाम, शटकर्म, सूर्य नमस्कार और ध्यान के माध्यम से करता है। चिंता, अवसाद, तंत्रिका रोग, व्यवहारगत विकार, अरुचि आदि मानसिक रोग और सिरदर्द, ब्रोंकाइटिस, दमा, मधुमेह, स्वप्रतिरक्षित विकार आदि जैसी मनोदैहिक बीमारियों से योगाभ्यास के माध्यम से बहुत अच्छे से निपटा जा सकता है। आधुनिक जीवन शैली में आज तनाव और चिंता एक आम समस्या बन गयी है। जीवन में आये बदलाव, कार्य या स्कूल, रिश्तों के उलझाव, वित्तीय समस्याएँ, अत्यधिक व्यस्तता और बच्चे व परिवार तनाव के सामान्य बाहरी कारण माने जा सकते हैं। इसी प्रकार स्थायी चिंता, निराशावाद, अपने बारे में नकारात्मक बातें करना, अव्यावहारिक अपेक्षाएँ, लचीलेपन का अभाव, सब कुछ या कुछ भी नहीं वाला दृष्टिकोण, तनाव के सामान्य आंतरिक कारण माने जाते हैं। आसन, प्राणायाम और ध्यान के नियमित अभ्यास से इनको दूर करने में बड़ी सहायता मिलती है। आसन शरीर और मस्तिष्क को स्थिरता एवं विश्रांति देते हैं, चिंतन की नई प्रक्रिया का मार्ग खोलते हैं और एकाग्रता को विकसित करते हैं जिससे अन्ततः उस व्यक्ति के दृष्टिकोण में सकारात्मक बदलाव आता है। गहरे साँस लेना, योग निद्रा और ध्यान का अभ्यास नकारात्मक दृष्टिकोण में कमी लाते हैं तथा शांति व आंतरिक आनंद लाते हैं और आशावादी चिंतन उत्पन्न करते हैं।

योगाभ्यास करने वालों की पाचन क्रिया दुरुस्त होती है और तनाव कम होता है। अध्ययन से पता चलता है कि योग स्वायत्त तंत्रिका तंत्र और अंतः स्रावी प्रणाली पर अपने प्रभाव डालकर योगाभ्यास करने वाले व्यक्ति के कोशिकीय और आणविक पहलुओं पर असर डालता है। अध्ययन में यह भी पाया गया है कि योगाभ्यास करने वालों में स्वायत्त संतुलन के साथ उनकी तंत्रिका प्रणाली भी मजबूत होती है जिससे उम्र

बढ़ने की प्रक्रिया की रफ्तार धीमी होती है। इस बात के भी संकेत मिलते हैं कि योग करने से तनाव झेलने की क्षमता बढ़ती है, शरीर लचीला होता है, शारीरिक क्षमता बेहतर होती है और थर्मोरेगुलेटरी क्षमता बढ़ती है। योग शरीर की प्रतिरक्षा की क्षमता बढ़ाकर बीमारियों से भी बचाता है। योग उच्च रक्तचाप, मधमेह और धमनी की बीमारियों से बचाव में भी कारगर है। इसके निरन्तर अभ्यास से मधुमेह, उच्च रक्तचाप जैसी बीमारियों में दवाओं का इस्तेमाल कम करना पड़ता है, यह हृदय की बीमारियों से भी बचाता है जिससे हम आधुनिक जीवन शैली से उपजी बीमारियों से लड़ने में सक्षम हो जाते हैं।

निष्कर्ष

वर्तमान जीवन पद्धति को मद्देनजर रखते हुए आज प्रत्येक व्यक्ति योग को अपने जीवन शैली का एक अहम हिस्सा बना रहा है। इस दिशा में और तीव्रता लाने के लिए भारत सरकार ने हाल के दिनों में योग को प्रोत्साहित करने और इसके विकास के लिए इसी उद्देश्य से अंतर्राष्ट्रीय योग दिवस को बड़े उत्साह एवं उमंग के साथ मनाया गया, जिससे योग प्रत्येक व्यक्ति के जीवन का हिस्सा बन जाय। इस आयोजन से योग के स्वास्थ्य फायदों के प्रति लोगों की जागरूकता बढ़ी और दुनिया भर में योग गुरुओं की माँग बहुत तेजी से बढ़ी है। आयुष मंत्रालय ने योग को सशस्त्र बलों, अर्द्धसैनिक और पुलिस कर्मियों के प्रशिक्षण का हिस्सा बनाने की शुरूआत की है। कर्मचारी एवं प्रशिक्षण विभाग ने नई दिल्ली में गृह कल्याण केन्द्र में योगा प्रशिक्षण कार्यक्रम भी शुरू कर दिया है। योग और प्राकृतिक चिकित्सा में छः केन्द्रीय अनुसंधान संस्थानों को शुरू किया जा रहा है। विश्व स्वास्थ्य संगठन ने भी इलाज में चिकित्सा के प्राचीन प्रणालियों को शामिल करने की जरूरत पर जोर दिया है। योग को जन–जन तक पहुँचाने के लिए नीतिगत पहल और रणनीतिक हस्तक्षेप की जरूरत है। योग ही वह माध्यम है जिससे आधुनिक जीवन शैली से उपजी चुनौतियों का सामना किया जा सकता है और पूरे विश्व में शांति और सद्भाव लाया जा सकता है।

सन्दर्भ ग्रंथ–

1. कौर, मनजीत एवं शर्मा, आर0सी0 (1986) स्वास्थ्य एवं शारीरिक शिक्षा की भूमिक'', लुधियाना टण्डन पब्लिकेशन
2. स्वामी अक्षय आत्मानंद (1997): 'योग भगाये रोग', प्रतिभा प्रतिष्ठान, नई दिल्ली
3. शुक्ल, श्याम सुन्दर : कबीर ग्रंथावली, नागरी प्रचारिणी सभा, वाराणसी, संस्करण 19
4. गुप्ता, रुचि : भारतीय सँस्कृति शाश्वत जीवनदृष्टि एवं संगीत, कनिष्क पब्लिकेशन डिस्ट्रीब्यूटर्स नई दिल्ली
5. योजना–फरवरी 2014, जून 2016
6. https://eh.m.wikipedia.orh
7. https://www.44books.com

युवा सशक्तीकरण व योग के साधन

अरुण कुमार सिंह
यू0जी0सी0 नेट (हिन्दी साहित्य)

सारांश

युवा किसी भी राष्ट्र की ताकत व भविष्य हैं। इन्हें प्रशिक्षित करना और भविष्य की चुनौतियों का सामना करने के लिए मजबूत बनाना समाज व राष्ट्र का कर्तव्य है। समर्थ युवा से समर्थ राष्ट्र का निर्माण होता है। भारत एक युवा देश कहलाता है। इसकी दो तिहाई आबादी युवा है। यह पीढ़ी शारीरिक न मानसिक क्षमताओं से परिपूर्ण हो। इसे उन्नत कर आत्मविश्वास भरना समाज का दायित्व है। हमारे पूर्वजों ने शारीरिक व मानसिक रूप से स्वस्थ रहने के लिए योगासन व प्राणायाम की प्रक्रिया ईजाद की। इसका श्रेय महर्षि पतंजलि को जाता है। हजारों वर्षों से चली आ रही यह भारतीय पुरातन विद्या आज भारत ही नहीं पूरे विश्व को लाभान्वित कर रही है। स्कूलों में योग के पाठ्य–क्रम चलाकर, जगह–2 योग शिविर लगाकर तथा इसके लिए अलग से योग कोष व योग भवन का निर्माण कर सरकार अपने नागरिकों को इस ओर आकर्षित कर रही है। आज योग और जीवन एक दूसरे के पूरक हैं। हर कोई योग कर स्वस्थ व दीर्घायु होना पसंद करता है। प्रतिदिन 20 मिनट योगा करने वाला व्यक्ति ही स्वस्थ एवं नीरोग रहता है। महर्षि पतंजिल ने योग के आठ चरण बताए है। यथा– (1) यम (2) नियम (3) आसन (4) प्राणायाम (5) प्रत्याहार (6) धारणा (7) ध्यान (8) समाधि

इसीलिए इसे अष्टांग योग भी कहा जाता है। हठ योग के पश्चात् राजयोग करने की सलाह दी जाती है। राजयोग विशुद्ध प्राणायाम है। योग की प्रशंसा में महर्षि पतंजलि ने कहा है–

पित्तः पंगुः कफः पंगुः पंग वो मानधाववः।

वायुना यत्र नीयन्ते तत्र गच्छन्ति वेगवत्।

पवनस्तेषु बलवान् विभाग करणान्मतः।

जो गुण मयः सूक्ष्मः शीतो रक्षः लघुश्चलः।।

योग के इन गुणों और लाभों को दखकर महर्षि पतंजलि की प्रशंसा में कहा गया है–

योगेन चित्तस्य पदेन वाचां

मलं शरीरस्य च वैद्यकेन।

योऽपाकरोत्त प्रकरं मुनीनानं।

पतंजलिं प्रांजलि रानतोऽस्मि।

गीता में भी कहा गया है–

तपस्विऽभ्योधिको योगी

ज्ञानिभ्योऽपि मतोऽधिकः

कर्मिभ्यश्चाधिको योगी

तस्माद्योगी भवार्जुन।।

गीता 6/46

बीज पद– योगासन, प्राणायाम, योगचिकित्सा, ऋतम्भरा प्रज्ञा, जीवन्मुख।

परिचय

योग–साधना अति प्राचीन काल से ही अत्यन्त लोकप्रिय रही है, आज भी है और आगे भी रहेगी। इसमें किंचित् मात्र सन्देह नहीं है। हमारे प्राचीन काल के ऋषि–मुनियों का यह एक महान अवदान सिद्ध हुआ है। भारतीय मोक्ष– साधना के क्षेत्र में योग एक सार्वभौम तथा सर्वोत्तम साधन पद्धति है। हमारे दर्शन आदि शास्त्रो में या धर्म–ग्रन्थों में किसी न किसी विषय पर या किसी अंश में वाद–विवाद बना ही रहता है। परन्तु योग ही एक ऐसा विषय है जिसमें वाद–विवाद के लिए कोई गुंजाइश नहीं है; क्योंकि योग तर्क का विषय नहीं है किन्तु अनुभूति का विषय है। इसलिये योग कहता है कि औपनिषदिक काल के ऋषि–मुनि लोग भी इस योग–साधना में कुशल अभ्यासी बन कर योगसिद्ध योगी बन जाते थे। योगाभ्यास से होने वाले लाभों को भी वे मुक्तकण्ठ से व्यक्त करते थे। जैसे कहा है–

'न तस्य रोगो न जरा न मृत्युः

प्राप्तस्य योगाग्निमयं शरीरम्' ।श्वेता. 2/92।।

अर्थात् जिस योगी ने योग–साधना का अभ्यास भली प्रकार से किया है और उस योग–साधना के द्वारा योगाग्निमय शरीर प्राप्त कर लिया है उस योगी को कोई भी रोग नहीं होता है। उसके पास शीघ्र बुढ़ापा नहीं आता है। और उस योगी को मृत्यु भी शीघ्र प्राप्त नहीं होती है। यही योग की विशेषता है। इसे बहिरंग योग या अठयोग विद्या के चमत्कार कहें तो अत्युक्ति नहीं होगी। योगी के इन्हीं महान् लाभों तथा गुणों के कारण ही आज 'योग–चिकित्सा' नामक एक नयी चिकित्सा पद्धति भी विकसित हुई है।

परन्तु ऐसा नहीं समझ लेना चाहिए कि योग एक चिकित्सा पद्धति मात्र है इसमें आध्यात्मिकता कुछ नहीं है। ऐसा समझना भारी भूल होगी; क्योंकि योग आदि से लेकर अन्त तक आध्यात्मिकता से परिपूर्ण है। इस प्रारम्भिक साधनों से ही जब इतना शारीरिक, मानसिक तथा बौद्धिक लाभ होता है, तो योग के उच्चांगों के साधनों से आध्यात्मिक लाभ होगा। इसमें तो कहना ही क्या है अर्थात् अवश्य ही आध्यात्मिक लाभ होगा। इसलिए उपनिषद में भी योगस्थिति का वर्णन करते हुए लिखा है कि–

'तां योगसमिति मन्यन्ते स्थिरमिन्द्रिय धारणाम्।

अप्रमत्तस्तदा भवति योगो हि प्रभवाप्ययौ'। कठ. 2/3/11

लक्ष्य

इन्द्रियों की स्थिर धारणा–संयमन का नाम ही योग है। अर्थात् योग–साधना के साधक को चाहिए कि अपनी इन्द्रियों को उनके विषयों से हटा करके इन्द्रिय तथा चित्त को शान्त व एकाग्र बना ले। चित्त की इस एकाग्रता से योगी अप्रमत्त बन जाता है और उसका योग इष्टोत्पादक और अनिष्ट निवारक होता है। योगशास्त्र में भी कहा है कि –''योगश्चित्तवृत्तिनिरोधः'।। योगसूत्र 1/2।। चित्त की एकाग्रता के बाद योगी चित्त और चित्त में उठने वाली अक्लिष्ट वृत्तियों को भी निरोध करने का प्रयत्न करता है, तो इस प्रकार प्रयत्न करने से योगी के भीतर ऋतम्भरा प्रज्ञा उत्पन्न हो जाती है। इस ऋतम्भरा प्रज्ञा से जो संस्कार उत्पन्न हो जाते है। वह दूसरे संस्कारों का नाश कर देता है, पर स्वयं तत्काल नाश नहीं होता। अन्त में जब वह संस्कार भी नष्ट हो जाता है तब योग की अन्तिम स्थिति वृत्तिनिरोध की अवस्था आ जाती है। तब क्या होता है? उसके लिए कहा है– **'तदा द्रष्टुः स्वरूपेऽवस्थानम्–।। योग सूत्र. 1/3।।** अर्थात् द्रष्टा–आत्मा तब अपने स्वरूप में याने ब्रह्मस्वरूप में

स्थित हो जाता है और यही योग–साधना की अन्तिम स्थिति है। तब वह जीवन्मुक्त बन जाता है। इसलिए श्रुति में कहा है कि–

'अध्यात्मयोगाधिगमेन देवं

मत्वा धीरो हर्षशकौ जहाति– ।। कठ. 1/2/12 ।।

अर्थात् जिस आत्मतत्व का दर्शन लाभ नितान्त कठिनाई से होता है, जो हृदयरूपी गहन गुहा में छिपा हुआ है उसका दर्शन अध्यात्मयोग के द्वारा ही सम्भव होता है। अतः इन्द्रियों की गति को इस प्रकार बना ली जाय कि वे विषयों की ओर न जा कर आत्माभिमुखी बन जाएं। इससे योगी धीर बन जाता है और तब आत्मदर्शन भी विस्पष्ट रूप में हो जाता है। आत्मदर्शन हो जाने पर आत्मतत्व का दृढ़ अपरोक्ष रूप में हो जाता है और तब योगी हर्ष और शोक को परित्याग करके अभयपद मोक्ष को प्राप्त कर लेता है। इसी अवस्था का नाम कैवल्य–मोक्ष है और इसी में योग–साधना की परिपूर्णता है।

आज तथाकथित इस वैज्ञानिक युग में भी यत्र–तत्र सर्वत्र ही योग का बोलबाला है। इसी से ज्ञात हो जाता है कि योग आज विश्व व्यापक बन चुका है। अर्थात् सम्पूर्ण विश्व में इसका प्रचार–प्रसार हो चुका है और हो रहा है। इस दिशा में विशेष कर भारतीय योगियों ने अच्छा योगदान दिया है अर्थात् देश–विदेशों में घूम–घूम कर योग का खूब प्रचार किया है। परिणामस्वरूप आज भारत की अपेक्षा विदेशों में योग का प्रचार और प्रसार अधिक मात्रा में हो रहा है और वहाँ पर योग के विषय में सूक्ष्म अनुसंधान चल रहा है। इसके लिए नव निर्मित विभिन्न प्रकार की मशीनों का इस्तेमाल खूब किये जा रहे है। अतः इन अनुसंधानों का परिणाम एक दिन अच्छा ही निकलेगा इसमें किंचित् मात्र सन्देह नहीं है। अतः सत्य की खोज में सत्य के पथ पर यह एक महत्वपूर्ण सही कदम है जो हमारे प्राचीन काल के ऋषि–मुनि, योगी यतियों ने बहुत पहले ही साधना के द्वारा अनुसंधान करके अन्तिम नतीजे पर पहुँचकर पूर्ण कर चुके थे।

हठयोग राजयोग का एक अभिन्न अंग है। हठयोग के बिना शरीर शोधन नहीं हो सकता और शरीर शोधन हुए बिना कुण्डलिनी जागरण, चक्रभेदन तथा राजयोग की उच्चतम समाधि आदि की सिद्धि नहीं हो सकती है। अतः हठयोग राजयोग का एक अभिन्न अंग विशेष है। इसलिए कहा भी है–

हठं बिना राजयोगो राजयोगं बिना हठः।

न सिद्धति ततो युग्ममानिष्पत्तेः समभ्यसेतै्।। गोरक्ष पद्धति

हठयोग के बिना राजयोग और राजयोग के बिना हठयोग सिद्ध नहीं होता। अतः योगसिद्धि प्राप्ति के लिए दोनों का अभ्यास अपेक्षित है ही।

इसे हठयोग क्यों कहा जाता है? इसका उत्तर यह है कि हठयोग का शाब्दिक अर्थ है हठ्+अच्। हठ पूर्वक किया जाता है। अतः इसको हठयोग कहा जाता है। अर्थात्– 'हठात् करणेन योगः' हठ पूर्वक, बलपूर्वक तथा जबरदस्ती से किया जाता है इसलिये इसे हठयोग के नाम से कहते है। हठयोग का दूसरा अर्थ भी है, यह इस प्रकार का है– ह–कार सूर्य स्वर और ठ–कार से चन्द्रस्वर कहे जाते हैं। इन दोनों स्वरों को प्राणायाम आदि के द्वारा समस्वर बना कर सुषुम्ना में प्रवेश करा देना हठयोग है। प्राणोत्थान, कुण्डलिनी जागरण तथा चक्रभेदन आदि प्रक्रिया भी हठयोग ही है।

हठयोग के आसन, प्राणायाम, मुद्रा षट्कर्मों से सम्पूर्ण शरीर का शोधन हो जाता है और साधनों में तीव्र प्रगति होने लगती है। अतः हठयोग के सप्त साधन विशेष महत्वपूर्ण है, उक्त सप्तसाधन का वर्णन आगे किया जा रहा है।

सप्त–साधन

'शोधनं दृढ़ता चैव स्थैर्यं च लाघवम्।

प्रत्यक्षं च निर्लिप्तं च घटस्थसप्तसाधनम्।। घेरण्ड संहिता।

इनका क्रम पूर्वक वर्णन आगे किया जा रहा है–

1. **शोधन–** षट्कर्म अर्थात् नेति, धौति तथा वस्ति आदि क्रियाओं के द्वारा शरीर का शुद्धिकरण करना ही शोधन है।
2. **दृढ़ता–**सब प्रकार योगासनों के अभ्यास के द्वारा शरीर को सुदृढ़ तथा मजबूत बना लेना दृढ़ता है।
3. **स्थैर्य–** मनेन्द्रियों की स्थिरता, सोम्यता तथा एकरसता का होना और चंचलता का सर्वथा अभाव हो जाना ही स्थैर्य है।

4. **धैर्य**–भयंकर विपत्ति में भी घबरा न जाना, विचलित न होना, दृढ़ एकरस बने रहना, होश न खो देना और अविचल भाव से बने रहना ही धैर्य है।

5. **लाघव**– रेचक, पूरक तथा कुम्भक आदि प्राणायामों के द्वारा शरीर को लघु–हल्का बना लेना ही लाघव है।

6. **प्रत्यक्ष**–हठयोग के अभ्यास से देहेन्द्रिय मन तथा बुद्धि आदि सब स्वस्थ एवं सबल बने रहने के कारण समस्त पदार्थों का अनुभव तथा व्यवहार कुशलतापूर्वक किया जाता है इसलिए इसे प्रत्यक्ष कहा गया है।

7. **निर्लिप्तता**–जगत् के सभी पदार्थों का व्यवहार करने पर भी किसी में भी आसक्ति का न होना ही निर्लिप्तता है। कारण यह है कि जगत् और तत्कार्य ही प्राणी मात्र के संसार बंधन का कारण है और उनसे अनासक्त बन जाना उनसे मुक्ति पाना है।

निष्कर्षः

निष्कर्षतः कहा जा सकता है कि योग साधना जीवन के गूढ़तम् लक्ष्यों को प्राप्त करने का अनन्यतम साधन है। इससे व्यक्ति को शारीरिक समस्याओं से ही नहीं बल्कि मानसिक दुर्बलताओं से भी मुक्ति मिलती है। योगाभ्यासविहीन व्यक्ति के जीवन में वात, पित्त, कफ, अनिद्रा आदि से सम्बन्धित बहुत सी बीमारियाँ उत्पन्न हो जाती हैं जिससे वह मानसिक चित्तवृत्तियों को एकाग्र नहीं कर पाता। योग साधना से व्यक्ति इन्द्रियों को उनके विषयो से हटाकर शान्त व एकाग्र कर देता है। इससे योगी के भीतर ऋतम्भरा प्रज्ञा उत्पन्न हो जाती है और सही संस्कार व्यक्ति में उत्पन्न होती है। इससे व्यक्ति की स्वयं प्रगति होता है और व्यक्ति के साथ राष्ट्र की प्रगति होती है। इन्हीं समस्त लक्ष्यों को दृष्टिगत करते हुए प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी जी ने भरसक प्रयास कर 21 जून को अन्तर्राष्ट्रीय योग दिवस के रूप में घोषित करवाया।

सुझाव–

आज उच्च शिक्षा में कालेज व विश्वविद्यालय स्तर पर शारीरिक शिक्षा की कक्षाएँ अनिवार्य रूप से चलायी जा रही है। इन्हें प्राथमिक स्तर से लाने की आवश्यकता है। योग जैसे शारीरिक अभ्यास के साथ नीतिशास्त्र के अनिवार्य रूप से अध्यापन की आवश्यकता है ताकि आज के समाज में

प्रचलित व अनवरत् उत्पन्न अनेक प्रकार की समस्याओं से निजात पाया जा सके। भारत साक्षर से शिक्षित तभी हो सकता है जब इन व्यवहारिक व नैतिक बातों को न केवल शिक्षा जगत से बल्कि अन्य सभी पहलुओं से जोड़ा जाय।

सारांश यह कि षटकर्मों से शरीर शोधन हो जाता है, आसनों से शरीर में दृढ़ता आ जाती है और मुद्राओं से मनेन्द्रियों में स्थिरता आ जाती है। प्रत्याहार से अन्तःकरण में धीरता–स्थैर्यता आ जाती है। प्राणायाम से लाघवता आती है और ध्यान से तत्वदर्शन अतीन्द्रिय दर्शन तथा आत्मदर्शन आदि हो जाता है। इस प्रकार के साधनों से अन्त में कैवल्य–मोक्ष मिल जाता है।

सन्दर्भ ग्रन्थ

1. हठयोग प्रदीपिका
2. भोजवृत्ति
3. गीता
4. स्वदेशी चिकित्सा के चमत्कार–डॉ0 अजीत मेहता
5. योगसूत्र–पतंजलि
6. भगवदगीता
7. योगा एनाऑमी सेकण्ड एडीशन

छात्रों के नैतिक मूल्यों पर विभिन्न सामाजिक आर्थिक स्तर के प्रभाव का–एक अध्ययन

Alka dwivedi and Dr. Alka david

Research scholar(Homescience–Humen develepment)

barkatullha university Bhopal(M.P)

principal govt.girls college raisen (M.P)

Introduction-

दुनियाँ में कुल आबादी का छठवां हिस्सा 10 से 19 वर्ष के आयु वर्ग के किशोरों का है। अतः इस काल में किशोर एवं किशोरियाँ जीवन की देन का उपभोग करने के लिए संघर्ष करने लगते है। किशोर एवं किशोरियों की समस्याओं को उजागर करना आसान है परन्तु समाधान एक जटिल प्रक्रिया है। किशोरावस्था बालक के जीवन की वह अवस्था है जिसका जन्म बाल्यावस्था के अन्त के साथ होता है और उनकी समाप्ति प्रौढ़ावस्था के आरम्भ में होती है। इस अवस्था को जीवन की सबसे कठिन अवस्था कहा जाता है। क्योंकि इस समय में किशोर एवं किशोरियों में शारीरिक एवं मानसिक परिवर्तन होते है। जो कि अनेक जोश, संवेदनशील एवं उत्साह से भरपूर एक परिवर्तन की अवस्था कही जा सकती है। इस उम्र के दौर के किशोर एवं किशोरियो शरीर, आकार, अनुपात, आकृति शरीर क्रियाओं के दृष्टि से नही बदलता है। बल्कि अभिवृत्तियों रुचियों और व्यवहार के तरीको से भी बदलता है। किशोरावस्था का समय कहा जाता हैं। किशोरों में नैतिकता और सामाजिक मूल्य का विकास सामाजीकरण द्वारा ही होता है। सामाजिक और नैतिक मूल्य बालक के सम्पूर्ण आचरण के निर्धारक तत्व माने जाते हैं। जिसके कारण बालक को उचित अनुचित, का ज्ञान, सामाजिक, उचित व्यवहार निर्देशित आचरण आदि करना होता है। यह ज्ञान व्यक्ति और बालक के स्वस्थ प्रौढ जीवन की आधारशिला होता है। क्योकि नैतिक मूल्य ब्यक्ति के व्यवहारों को प्रभावित करते है। और उनके आचरणो की रूपरेखा निर्धारित करते है। नैतिक व्यवहार अर्जित किया जाता है। एक बालक जन्म से न नैतिक होता है न अनैतिक बल्कि सामाजिक पर्यावरण में आने के बाद इस तथ्य का निर्धारण होता है कि वह नैतिक या सकारात्मक विकसित होगा या अनैतिक व ऋणात्मक व्यवहार व्यक्तित्व में समाहित करेगा। यह संचेतना परिवार में विकसित होती है। धीरे–2 सामाजिक सम्पर्क के कारण ही नैतिक मानदण्डों तथा उसकी आवश्यकताओं का ज्ञान होता है साथ ही यह भी सत्य है कि कोई भी बालक अपना स्वयं का नैतिक आचरण विकसित नही कर सकता। सामाजिक आचरण का अनुपालन एकदम नही हो पाता इसके लिए सतत् प्रयत्न नैतिक शिक्षा और समय भी आवश्यक है। 12 वर्ष की अवस्था तक पहुँचने पर बालक इस योग्य होता है। कि उसका व्यवहार स्थायी हो जिन घरों में दोहरे नैतिक मापदण्ड पाये जाते है। वहाँ पर बालक के नैतिक विकास में संघर्ष पाया जाता है। प्रत्येक आयु स्तर पर बालक अपने समाज और

परिवार से धीरे–धीरे इन मूल्यों को प्राप्त करता है नैतिक मूल्य किशोर बालको को आदर्श व्यवहार करने के लिए प्रेरित करते हैं जो किशोर बालक इन नैतिक मूल्यो को अर्जित नही कर पाता है वह धीरे–धीरे समाज का एक अनुपयुक्त अंग समझा जाने लगता है जब किसी बालक मे उपयुक्त मात्रा में नैतिक मूल्यो का विकास हो जाता है तब उसमे इसी रूप में सुरक्षा की क्षमता की भावना का विकास हो जाता है माता–पिता का सामाजिक आर्थिक स्तर उनके अपेक्षाओ को प्रभावित करते हुए पाया गया है और उनके बच्चो के आचरण में भी उनकी प्राथमिकता होती है। अतः स्वाभाविक रूप से ही उसे सब कुछ सिखाने का प्रयत्न करना चाहिए क्योंकि बालकों के सर्वांगीण विकास में नैतिकता का अति महत्वपूर्ण स्थान हैं। नैतिक विकास के कारण ही विश्वास में दृढ़ता और समझ में प्रखरता आती हैं। नैतिकता ही वह गुण है जो बालक को सामाजिक प्राणी बनाने में मददगार होता हैं। और उसके उत्थान में सहयोग करता हैं। नैतिक विकास बालक के चरित्र निर्माण का एक महत्वपूर्ण हिस्सा है क्योंकि नैतिक गुणों का समूह ही चरित्र कहलाता है यह व्यक्तित्वशील गुणों का एक महत्वपूर्ण निर्धारक तत्व है। प्रायः सभी बालक अपने परिवार और समाज के अधिकांश मूल्यों को ग्रहण कर लेते हैं। और उनके द्वारा निर्दिष्ट आचरण करते हैं। परन्तु इससे यह नही समझना चाहिए कि सभी मानव समाजों और संस्कृतियों में एक से मूल्य पाये जाते हैं। भिन्न–भिन्न संस्कृतियों में भिन्न–भिन्न प्रकार के मूल्य विकसित होते हैं। एक समाज के मूल्य दूसरे समाज के मूल्यों से बहुत कुछ भिन्न हो सकते हैं। इसी प्रकार एक समुदाय के मूल्य दूसरे समुदाय के मूल्यों से भी भिन्न हो सकते हैं। बालक में सुरक्षा की भावना जितनी अधिक होती है नैतिक मूल्यों की भावना भी उतनी अधिक होती है। जिन बालको के नैतिक मूल्य दृढ़ होते हैं उनमें सामाजिक तनाव तथा संघर्ष कम होता है। अतः मानसिक संर्घर्षों से मुक्ति पाने के लिए सबसे सुन्दर उपाय यही है कि बालक अपने भीतर नैतिक मूल्यो को दृढ़ बनाए और नैतिक आचरण का ज्ञान नैतिक आचरण पर चलने की प्रेरणा दे

उददेश्य–छात्रों के नैतिक मूल्यों पर विभिन्न सामाजिक आर्थिक स्तर के प्रभाव का अध्ययन करना

परिकल्पना– छात्रों के नैतिक मूल्यों पर विभिन्न सामाजिक आर्थिक स्तर के प्रभाव के तुलनात्मक अध्ययन में अन्तर पाया जाएगा।

Methodology-

अध्ययन का क्षेत्र – उक्त शोध कार्य हेतु मध्यप्रदेश के भोपाल शहर का चयन किया गया है।

न्यादर्श तथा उसका चुनाव– न्यादर्श के चुनाव के लिए भोपाल शहर के 300 छात्र–छात्राओं का चयन किया गया है। छात्र–छात्राओं का चयन दैव निदर्शन विधि द्वारा किया गया है।

Table

S.n	Sample	Subtotal	Grandtotal
01.	छात्र	150	300
02.	छात्रा	150	

अनुसंधान उपकरण एवं फलांकन–

1. **नैतिक मूल्य परीक्षण–** वी0 भारती द्वारा निर्मित

2.सामाजिक आर्थिक स्तर– को मापने के लिये नैतिक मूल्य परीक्षण में अंकित सामाजिक आर्थिक स्तर को लिया गया है।

Table -1

छात्रों के नैतिक मूल्यों पर विभिन्न सामाजिक आर्थिक स्तर का तुलनात्मक परिणाम ।

विभिन्न सामाजिक आर्थिक स्तर	संख्या	माध्य	मानक विचलन
सामान्य	16	4.13	1.857
मध्यम	75	4.07	
उत्तम	59	3.90	1.447

प्रसरण विसरण की सारांश तालिका

चर	प्रसरण विश्लेशण	वर्गो का योग	स्वातंत्रय कोटी	माध्य वर्ग योग	'एफ' का मान	"पी" का मान
नैतिक मूल्य	समूहो के 'अन्तर्गत' प्रसरण	1.187	2	.593	0.278	<0.05
	समूहो के 'मध्य' प्रसरण	313.806	147	2.135		

स्वतंत्रता के अंश– 2, 147 0.05 स्तर पर सार्थकता हेतु मान– 3.0718

0.01स्तर पर सार्थकता हेतु मान – 4.7865

conclusion-

उपरोक्त सारणी में विभिन्न सामाजिक– आर्थिक स्तर श्रेणी के छात्रों के नैतिक मूल्यों का तुलनात्मक परिणाम प्रदर्शित किया गया है। परिणामों से स्पष्ट है कि सामान्य सामाजिक– आर्थिक स्तर का मध्यमान (4. 13), मध्यम सामाजिक–आर्थिक स्तर का मध्यमान (4.07) तथा उत्तम सामाजिक–आर्थिक स्तर का मध्यमान (3.90) पाया गया हैं। इन सामाजिक–आर्थिक स्तर समूहों के मध्यमान का अन्तर देखने के लिए प्रसरण विसरण पद्धति से एफ के मान की गणना की गई। एफ का मान नैतिक मूल्य के लिए (F=0.278, df=2, 147) पाया गया जो कि 0.01 के न्यूनतम निर्धारित मान (4.786) एवं 0.05 के न्यूनतम के निर्धारित मान (3. 071) से अपेक्षाकृत बहुत कम हैं। अतः मध्यमान अंतर संख्याकीय दृष्टिकोण से सार्थक नही हैं।

निष्कर्ष स्वरूप उपरोक्त परिणामों के आधार पर यह कहा जा सकता हैं कि छात्रों के नैतिक मूल्य पर विभिन्न सामाजिक– आर्थिक स्तर का कोई प्रभाव नहीं पाया गया है। छात्र–छात्राओं के नैतिक मूल्य पर विभिन्न सामाजिक– आर्थिक स्तर के प्रभाव के अध्ययन में छात्र–छात्राओं के नैतिक मूल्य ईमानदारी, सच्चाई, मानवता एवं शिष्टाचार पर इनके विभिन्न सामाजिक, आर्थिक स्तर उच्च, मध्यम, निम्न का कितना प्रभाव पाया जाता है। इसका अध्ययन किया गया है।प्रस्तुत अध्ययन में प्राप्त परिणामों के आधार पर यह निष्कर्ष निकलता है। कि छात्र– छात्राओं के नैतिक मूल्य ईमानदारी पर उनके उच्च सामाजिक आर्थिक स्तर का कोई प्रभाव नही पाया गया है। छात्र– छात्राओं के नैतिक मूल्य सच्चाई पर उनके उच्च सामाजिक आर्थिक

स्तर का कोई प्रभाव नही पाया गया है। इसी प्रकार छात्र–छात्राओ के नैतिक मूल्य मानवता एवं शिष्टाचार पर भी उनके उच्च सामाजिक आर्थिक स्तर का कोई प्रभाव नही पाया गया है। इसी क्रम में मध्यम सामाजिक –आर्थिक स्तर के छात्र–छात्राओं के नैतिक मूल्य ईमानदारी पर कोई प्रभाव नही पाया गया है जबकि छात्राओ ंके नैतिक मूल्य ईमानदारी पर उनके मध्यम सामाजिक स्तर का आंशिक प्रभाव पाया गया है छात्र–छात्राओं के नैतिक मूल्य सच्चाई एवं मानवता पर उनके मध्यम सामाजिक आर्थिक स्तर का कोई प्रभाव नही पाया गया है जबकि नैतिक मूल्य शिष्टाचार पर उनके मध्यम सामाजिक आर्थिक स्तर का आंशिक प्रभाव पाया गया है। इसी प्रकार छात्र –छात्राओं के नैतिक मूल्य पर उनके निम्न सामाजिक आर्थिक स्तर का प्रभाव देखा गया तो यह निष्कर्ष प्राप्त हुआ कि निम्न सामाजिक आर्थिक स्तर वाले छात्र–छात्राओं के नैतिक मूल्य ईमानदारी पर आंशिक प्रभाव पाया गया है जबकि छात्र–छात्राओं नैतिक मूल्य सच्चाई, मानवता पर कोई प्रभाव नही पाया गया है तथा छात्र– छात्राओं के नैतिक मूल्य शिष्टाचार पर भी उनके निम्न सामाजिक आर्थिक स्तर का कोई प्रभाव नही पाया गया है इस प्रकार इस प्रस्तुत अध्ययन में निष्कर्ष स्वरूप उपरोक्त परिणामों के आधार पर यह कहा जा सकता हैं कि छात्र–छात्राओं के नैतिक मूल्य पर विभिन्न सामाजिक–आर्थिक स्तर का कोई प्रभाव नहीं पाया गया है।

References.1–गुप्त राम बाबू (2000). विकासात्मक मनोविज्ञान ,अष्टम संस्करण, रतन प्रकाश मंदिर दिल्ली गेट आगरा पृ.सं.–372–388

2– जैन डॉ0 शशि प्रभा (2005) बाल्यावस्था, शिवा –प्रकाशन श्री गणेश मार्केट खजुरी बाजार इन्दौर पृ.सं0–232–243

3– सिह डॉ0 बृन्दा किशोरावस्था समस्या और समाधान, मंथन पब्लिकेशन संस्करण, (2010)जयपुर

4–श्रीवास्तव डॉ डी.एन. (2008) बाल मनोविज्ञान बाल विकास ,14वो संस्करण विनोद पुस्तक मन्दिर आगरा पृष्ठ सं0–72

5– तिवारी डॉ0 आर. एम. बाल मनोविज्ञान ,कैलाश पुस्तक सदन ग्वालियर पृष्ठ सं0–207–213

किशोर वर्ग की समस्याएँ : इलाहाबाद शहर में नैनी क्षेत्र के संदर्भ में

डॉ0 प्रिया तिवारी

प्रवक्ता (समाजशास्त्र)

हे0नं0ब0राज0स्ना0

महाविद्यालय, नैनी, इला0

सारांश –

युवावस्था रूपी भवन की नींव किशोरावस्था होती है। नींव जितनी दृढ़ रखी जाएगी, भवन उतना ही मजबूत होगा। किशोरावस्था में बच्चों के अंदर बहुत ज्यादा जोश रहता है अगर इस जोश को सही दिशा में लगा दिया जाए तो परिवार, समाज और देश पूरी तरह बदल जाएगा लेकिन इसी अवस्था में सबसे ज्यादा समस्याएं भी होती हैं यह अवस्था मुख्यतः 12 से 19 वर्ष तक की मानी जाती है।[1] यह यौन विकास से प्रारम्भ होती है और प्रजनन परिपक्वता तक ले जाती है इस समय शारीरिक, भावनात्मक और व्यवहार सम्बन्धी परिवर्तन आते हैं। इस समय सबसे महत्वपूर्ण शारीरिक परिवर्तन होते हैं और किशोर अपनी अलग पहचान बनाने के लिये लालायित होते हैं और माता–पिता से स्वतंत्र रहकर अपने आयु के समूह में ज्यादा समय व्यतीत करते हैं। इस परिवर्तन को वो महसूस तो करते है लेकिन समझने में असमर्थ होते हैं।[2] इसके लिये वह जानकारी एकत्रित करना चाहते हैं और इसके लिये वह अपने आयु के दोस्तो पर तथा साहित्य पर निर्भर हो जाते हैं। कुछ किशोर समाज आयु के लोगों के दबाव के सामने मजबूर हो जाते हैं कुछ इसमें बिना परिणाम सोचे अनुचित कार्य करने लगते हैं। सिगरेट, मादक द्रव्यों का प्रयोग, ड्रग्स, तम्बाकू वगैरह लेने लगते हैं और कुछ यौनाचार की ओर बढ़ने लगते है और बिना जानकारी के इस दिशा में बढ़ने से कुछ भयंकर बीमारियों को आमंत्रित कर लेते हैं जिसका परिणाम उनकों तथा उनके परिवार को भविष्य में भोगना पड़ता है।[3]

इसी तरह किशोरावस्था में तनाव, क्रोध, अनिद्रा, हिंसा आदि समस्याएं देखने को मिलती हैं। माता–पिता शिक्षक तथा पड़ोसी जैसे प्राथमिक सदस्य उनसे मित्रवत व्यवहार करके, अनुशासन देकर, परामर्श कराकर, योग–शिक्षा व अन्य तरह की रचनात्मक क्रियाओं की शिक्षा प्रदान करके इन समस्याओं को काफी हद तक कम किया जा सकता है।[4]

कुंजी शब्द – शारीरिक परिवर्तन, मानसिक परिवर्तन, भावनात्मक परिवर्तन, तनाव, अनिद्रा, हिंसा, सहयोग, परिचर्चा, प्रेम, अनुशासन

प्रस्तावना –

किशोर काल को सुनहरे वर्ष बसन्त काल आदि कहकर लेखको ने सम्बोधित किया हैं। किशोर काल को मुख्यतः 12 से 19 वर्ष तक रहता है। इस समय बालक – बालिकाओं का शारीरिक तथा मानसिक विकास होता है उसमें काल्पनिक शक्ति, भावनात्मक, कलात्मकता का विकास होता है। वह नये एवं ऊँचे आदर्शो की तरफ देखता है और वैसा ही बनने का प्रयास करता है।[5] भविष्य में कोई क्या बनेगा इसकी नींव किशोरावस्था में ही तय हो जाती है। उदाहरणतः जैसे एक गृहणी को खाना खाने के लिये खाना बनाना ही पड़ता है, जितना अच्छा खाना बनेगा उतना अच्छा स्वाद उसको स्वयं मिलेगा तथा साथ में परिवार को

मिलेगा वैसे ही अगर बच्चे अपने किशोरावस्था को सँवार लें तो उनकी युवावस्था व पूरा जीवन ही संवर जायेगा।[6] किशोरावस्था के आये बिना युवावस्था आ भी नहीं सकती अतः किशोरावस्था वह सीढ़ी है जो जीवन के आगे की मंजिल तय करती है। अगर बच्चे को संगीतज्ञ बनना है तो तैयारी किशोरावस्था से, खिलाड़ी बनना है तो तैयारी किशोरावस्था से, साहित्यकार, राजनेता, उद्योगपति आदि की तैयारी किशोरावस्था से ही किशोरों को करनी पड़ती है।

किशोरावस्था शारीरिक परिपक्वता की अवस्था है इसी अवस्था में बच्चों की हड्डियाँ मजबूत होती हैं, शारीरिक दौड–भाग के कारण भूख ज्यादा लगती है कामुकता की अनुभूति होने लगती है।[7] प्रारम्भ में वह अपने ही लिंग के साथियों के प्रति विशेष प्रेम होता है इसी के कारण समलिंगीय क्रियाएं भी होने लगती हैं। यह क्रियाएँ समाज के और लोगों के प्रतिकूल होती हैं जिससे वह इस भावना को दमन करने की कोशिश करता है इस प्रक्रियायें उसकी मानसिक ग्रंथि पैरानोइया नामक पागलपन पैदा करती है जिसमें व्यक्ति हर दूसरे व्यक्ति पर संदेह करता है कि हर दूसरा व्यक्ति उसके खिलाफ षड़यंत्र कर रहा है।[8] किशोरावस्था उक्त स्थितियों को पार करके विषमलिंगी प्रेम अपने में विकसित करता है और फिर प्रौढ़ अवस्था आने पर एक विषमलिंगी व्यक्ति को अपना प्रेमकेन्द्र बना लेता है जिसके साथ वह अपना जीवन व्यतीत करता है।[9]

किशोर बालक में बुद्धि का विकास पर्याप्त होता है उसकी सोचने की क्षमता बहुत ज्यादा होती है। उसे असीमित शक्ति का आभास होता है इस क्रम में वह हर किसी से सीखते हुए, सहज रूप से आगे बढ़ता है।

किशोरावस्था जैसा कि सभी लोग मानते हैं कि एक बसंत काल की तरह होती है लेकिन यह तभी संभव है जब उसमें किसी तरह की स्वास्थ्य समस्याएँ न हों लेकिन हर किशोर किसी न किसी रूप में छोटी–बड़ी स्वास्थ्य समस्याओं से ग्रसित रहता है। इसी को ध्यान में रखकर यह अध्ययन किया गया है।

तथ्य संकलन एवं प्रविधि – यह अध्ययन मुख्यतः नैनी क्षेत्र में 12 से 19 वर्ष के लगभग 200 छात्र–छात्राओं पर किया गया है। इस अध्ययन में प्रश्नावली को आधार बनाया गया। इसका उद्देश्य यह था कि प्रश्नावली द्वारा प्रश्न पूछे जाने पर यह बच्चे संकोच नहीं करेंगे और ईमानदारी से जवाब दे पायेंगे।

इस प्रश्नावली में जिन समस्याओं को ध्यान में रखकर प्रश्न बनाये गए उनमें मुख्य है मोटापा, मादक द्रव्यों या तम्बाकू सेवन, तनाव, कुपोषण, पर्यावरणीय तनाव, यौन शोषण, घरेलू हिंसा, अनिद्रा, थकान, शरीर के किसी हिस्से में दर्द, वजन कम, भूख में कमी, चिड़चिड़ापन, व्यक्तिगत सफाई या स्वच्छता की कमी, उदासी या निराशा, मौत या आत्महत्या का विचार, शारीरिक बदलाव के कारण तनाव, सामाजिक व पारिवारिक तनाव, सीखने में परेशानी, यौन और प्रजनन स्वास्थ्य, एच.आई.वी. हिंसा आदि।[10]

निष्कर्ष –

यह प्रश्नावली 100 छात्रों द्वारा तथा 100 छात्राओं द्वारा भरवायी गयी तथा 60ः किशोरी तथा 43ः किशोर मोटापे से ग्रस्त है। मोटापे का मुख्य कारण जंक फूड का सेवन माना जा सकता है इसी तरह लड़कियों में मोटापे को लेकर एक तरह का सामाजिक भय दिखायी दिया जिसके कारण किशोर लड़कियाँ जीरो फिगर पाने की चाहत में खाना कम खाने लगती हैं और कुपोषण की शिकार हो जाती हैं इस स्थिति में उनमें एनीमिया हो जाता है और यदि एक किशोरी कुपोषित हो जाती है तो उससे पूरा समाज कुपोषित होता है क्योंकि यही किशोरी आगे भविष्य में माँ बनती है और कमजोर माँ, कमजोर बच्चे को ही जन्म देगी।[11] यही श्रृंखला चलती रही है।

तनाव एक महत्वपूर्ण और टाले जाने वाले समस्या के रूप में किशोरों के बीच पाया गया। 10ः किशोर–किशोरियों को छोड़कर सभी किसी न किसी तनाव एवं अवसाद ग्रस्त पाये गये। शारीरिक बदलाव को लेकर तनाव, पढ़ाई का तनाव, घर, आस–पड़ोस का तनाव यहां तक कि स्कूल–कालेज के तनाव से जूझते देखे गये। कुछ बच्चों का कहना था कि परीक्षाफल आने के समय इतना दबाव रहता है कि मन करता है कहीं चले जाये। इसी तरह लगभग 28ः किशोर एवं 3ः किशोरियां ऐसे मिले जिन्होंने मादक द्रव्यों का सेवन किया है। यह सेवन वह उस समय करते है जब वह परिवार के संग नहीं रहते सिगरेट का कभी–कभी सेवन भी लगभग 11ः किशोर करते है। इसी तरह 38ः किशोर बाहरी हिंसा में संलिप्त पाये गये और लगभग 18ः किशोरयिों को किसी न किसी रूप में घरेलू हिंसा का सामना करना पड़ा।

इसी तरह 78ः किशोर तथा 87ः किशोरियां किसी न किसी सम्बन्ध में परिवारजनों से या शिक्षक–शिक्षिकाओं से झूठ बोलते हैं, इस झूठ की प्रकृति ज्यादातर गम्भीर नहीं रहती।

81ः किशोरियां कुपोषित पायी गयी जिनमें स्वास्थ्य के मानक स्तर में कमी देखी गयी जिसके कारण इनमें थकान एवं चिड़चिड़ापन रहता है।

सर्वेक्षण में पाया गया कि लगभग 68ः किशोर एवं 23ः किशोरियों ने बिना लाइसेंस के बाइक एवं स्कूटी चलाया और दुर्घटना के शिकार हुए एवं कुछ को तो मामूली एवं कुछ को गम्भीर चोटें भी आयीं।

किशोर–किशोरियां व्यक्तिगत सफाई या स्वच्छता के प्रति जागरूक दिखे लेकिन 42ः किशोर एवं 29ः किशोरियां स्वास्थ्य एवं स्वच्छता के प्रति जागरूक नहीं पाये गए।

इसी तरह कानून की जानकारी का अभाव भी इनमें देखा गया इस तरह किशोरावस्था में अचानक से शारीरिक मानसिक परिवर्तन के कारण इन बच्चों को कई तरह की समस्याओं से सामना करना पड़ता है।

विमर्श –

किशोरावस्था यूं तो जीवन का सबसे अच्छा समय माना जाता है लेकिन हमने पाया कि इस समय जितनी समस्या का सामना किशोर–किशोरियों एवं उनके संग उनके माता–पिता को करना पड़ता है उतना शायद ही और अवस्था में करना पड़ता हो। लेकिन यदि बच्चे एवं उनके माता–पिता कुछ सावधानियाँ कर लें और कुछ चीजों पर विरोध ध्यान दें तो किशोर काल को बसंत काल ही माना जायेगा।

सबसे पहले तो किशोर बच्चों को यह समझना चाहिए कि उनके मां–बाप उनके सबसे बड़े शुभचिन्तक है इन बच्चों को उनका आदर करना चाहिए, उनके विचारों एवं विश्वासों की कद्र करना चाहिए। इन सबको अपने माता–पिता की इच्छाओं का भी विशेष ध्यान रखना चाहिए।

इन सबको जानने के बावजूद होता इसके विपरीत है यह बच्चे मां–बाप को छोड़कर सबकी बात मानते हैं और इसी कारण और लोग इनको गुमराह कर देते हैं। सबसे पहले अगर हमें इन बच्चों को सम्भालना है तो इस परिवार व समान की संरचना में सुधारात्मक प्रयास करना पड़ेगा।[12] इसी तरह मां–बाप को भी यह समझना पड़ेगा कि अगर उन्हों इन रिश्तों को नहीं सम्भाला तो बाहरी लोग इस खाई को और बढ़ाने का काम करेंगे इसीलिए माता–पिता को कुछ जरूरी बातों का ध्यान रखना आवश्यक है जैसे इस उम्र में वे बच्चों के दोस्त बनकर रहें उनके साथ तानाशाही वाला व्यवहार न करके प्रेमपूर्वक बातें करें जिससे किशोर भी उनसे अपने मन की बात कहने में संकोच नहीं करेगा। इसी तरह माँ–बाप बच्चों को जिम्मेदारी सौंपे इससे उनमें कर्तव्यबोध का विकास होगा। मां–बाप यह मानकर चलें कि बच्चें उनके द्वारा इस संसार में

आये है इसका अर्थ यह कतई नहीं है कि इन पर उनका अधिकार है बल्कि वह केवल एक माध्यम है इसीलिए कभी उन पर अधिकार जमाने की कोशिश न करें और अपनी रुचि, अरुचि उन पर न थोपें।[13]

इसी तरह माता–पिता को तथा शिक्षक–शिक्षिकाओं को समय–समय पर इन बच्चों का चिकित्सीय परामर्श उपलब्ध करायें। चिकित्सक इन बच्चों को उनकी समस्याओं एवं उनके निवारण से परिचित करायेंगे। चिकित्सकों को भी सुझाव है कि जब वे ऐसे किसी बच्चे को देखें तो उन पर थोड़ा ज्यादा समय दें उनको साफ–सफाई (शरीर एवं दंतों) की तथा यौन व्यवहार के बारे में भी शिक्षित करें। विद्यालयों को समय–समय पर विद्यार्थी चिकित्सक परिचर्चा आयोजित की जानी चाहिए। इसी तरह गैर–सरकारी संगठनों को भी समय–समय पर विद्यालयों में कैम्प लगाना चाहिए जिसमें बच्चों को यौन व्यवहार करने के लिये सही समय, भ्प्ट संक्रमण एवं रोकथाम की शिक्षा एवं कंडोम की जानकारी प्रदान की जानी चाहिए तथा साथ ही पाठ्यक्रम में यौन शिक्षा भी शामिल किया जाना चाहिए जिससे उनमें भटकाव की स्थिति न आये।[15]

इसी तरह कानून की जानकारी एवं यातायात के नियमों की जानकारी एवं सीट बेल्ट की उपयोगिता बताने के लिए कानून विशेषज्ञ एवं पुलिस की भी परिचर्चाएं समय–समय पर करायी जानी चाहिए। इसी तरह विद्यालयों में पढ़ाई के पश्चात मार्शल आर्ट एवं तैराकी की भी कक्षाएं चलायी जाने चाहिए ताकि अनचाही दुर्घटनाओं का सामना इन बच्चों को न करना पड़े।

संदर्भ सूची

1. नॉर्मन आर0ई0 एट अल बाल शारीरिक शोषण भावनात्मक दुरुपयोग और उपेक्षा के दीर्घकालिक स्वास्थ्य परिणामः एक व्यवस्थित समीक्षा और मेटा–विश्लेषण चिकित्साए 2012, 9(ए) ई–1001349।
2. मास्टेन ए0एस0 एट अल अंडरएज पीने : एक विकास ढांचा बाल रोग 2008, 121ः रू0 235 क्व्रू 10.1542/पेड्स 2007–2243ए।
3. गोर एफएम एट अल 10.24 वर्ष आयु वर्ग के युवा लोगों में बीमारी का वैश्विक बोझः एक व्यवस्थित विश्लेषण। द लैनसेट, 2011, 377:2083–2102
4. पैटन जीसी एट अल किशोरावस्था में आम मानसिक विकारों का पूर्वानुमानः 14 वर्ष का संभावित समूह का अध्ययन। द लैनसेट, 2014।
5. अरोड़ा एम एट अल किशोरावस्था और बच्चों के बीच तम्बाकू को रोकने और नियंत्रित करने के लिए एक ढांचाः प्रभाव मॉडल का परिचय इंडियन जर्नल ऑफ पेडियाट्रिक्स, 2013, 80:55–62
6. पोटोक्नीक एस, पेरेरा के पहली पीढ़ी के प्रवासियों में डिप्रेशन और चिंता लैटिन युवाः भविष्य के अनुसंधान के लिए महत्वपूर्ण सहसंबंध और प्रभाव। जर्नल ऑफ नर्वस एण्ड मानसिक डिसेज, 2010, 198(7): 470–7
7. विनेर आर एट अल किशोरावस्था और स्वास्थ्य के सामाजिक निर्धारक द लैन्सेट, 2012, 379(9826):1641–52
8. ग्रिबिल जे0 ब्रेमर जे0 जनसांख्यिकीय लाभांश प्राप्त करने की चुनौतियां, वाशिंगतन डी0सी0 जनसंख्या संदर्भ ब्यूरो, 2012

9. सॉयर एस0एम0 एट अल किशोरावस्था : भविष्य के स्वास्थ्य के लिए एक नींव द लैनसेट, 2012, 379:1630–1640
10. क्लिफ्टन डी0 हर्विश ए0 द वर्ल्ड यूथः 2013 डेटा शीट वाशिंगटन, डी0सी0 जनसंख्या संदर्भ ब्यूरो, 2013
11. फेयर जे0 एट अल विश्व विकास रिपोर्ट 2007 रू0 विकास और अगली पीढ़ी वाशिंगटन डी0सी0, द वर्ल्ड बैंक, 2006
12. किशोर स्वास्थ्य और विकास एन0पी0आई0पी0 आर0सी0 चरण–11
13. इम्प्लीमेन्टेशन गाइड ऑन आर0सी0एच0 200
14. अभिविन्यास कार्यक्रम हैंडआउट्स।
15. खुशहाल रिश्ते, जीने के संदर्भ में सदगुरू प्रेसेंस टाइम, मई 16, 2015

“युवा सशक्तीकरण तथा योग की भूमिका”

डॉ0 मोनिका गौतम

असिस्टेण्ट प्रोफेसर, समाजशास्त्र

महाराजा बिजली पासी

राजकीय स्नातकोत्तर

महाविद्यालय, आशियाना,

लखनऊ।

सारांश

योग ऐसी चिकित्सा है जो व्यक्ति के शरीर, मन और आत्मा को एकीकृत करता है, शरीर को मजबूत बनाता है, मन को शांत करता है। व्यक्ति को शारीरिक और आध्यात्मिक रूप से प्रबुद्ध करता है, तनाव दूर करता है और श्वसन से सही तरीका सिखाता है। शारीरिक मुद्रा मेंसुधार करना है, हर परिस्थिति से मुकाबला करने का कौशल प्रदान करता है तथा दृढ़ संकल्प एवं एकाग्रता के लिए व्यक्ति को प्रोत्साहित करता है। यह एक ऐसी पद्धति है जिसमें विभिन्न प्रकारके शारीरिक श्रम युवाओं को वर्तमान के प्रति जागरूक करते हैं और शरीर–मन की निरंतरता में मौजूद भावनाओं के सम्बन्ध में उन्हें सचेत करने का प्रयास करते हैं।

मुख्य शब्द :– युवा सशक्तिकरण, गैर–संचारी रोग, चयापचय में संतुलन, प्राणायाम, योग, स्वास्थ्य।

प्रस्तावना

मनुष्य एक जिज्ञासु प्राणी है, अज्ञान के प्रति जानने की उसकी प्रबल उत्कंठा रहती है। जब तक उसकी यह उत्कंठा पूरी नहीं हो जाती तब त कवह चुप नहीं बैठता। समाज में जहां तक युवाओं का प्रश्न है, तो मेरी समझ से युवा किसी भी समाज की रीढ़ की हड्डी है। समाज की गतिशीलता का ज्यादा भार इन्हीं के कन्धों पर होता है, ये चाहे तो समाज को क्रियात्मकता की तरफ मोड़ सकते है। या फिर उसे अंधेरी गुफा में भटका सकते हैं। समाज में परिवर्तन की आंधी के ये सूत्रधार होते हैं। दुनिया के इतिहास इस बात की गवाही देते है कि उसके सामाजिक, आर्थिक और राजनैतिक विकास में युवाओं की सराहनीय भागीदारी रही है। आज विकसित, विकासशील और विकास की प्रक्रिया से जुड़े दुनिया के तमाम देशों के युवाओं का अपने राष्ट्र की प्रगति में विशेष स्थान है। समाज से अगर हम युवाओं को अलग कर दें तो समाज की पूरी गतिशीलता में ही व्यवधान उत्पन्न हो जाता है। ऐसा लगने लगता है जैसे समाज जीवन विहीन हो गया है, उसमें निर्जीवता आ गयी है। अतः हम कह सकते हैं कि युवा देश के ह्रदय की धड़कन होते हैं।

युवा सशक्तीकरण एक ऐसी प्रक्रिया जिसमें बच्चों और युवाओं को अपने फैसले स्वयं लेने के लिए प्रोत्साहित किया जाता है। इसके माध्यम से वे अपनी स्थिति को देख–समझकर संसाधनों तक अपनी पुहँच

में सुधार करते हैं और अपने विश्वासों, मूल्यों और व्यवहार के माध्यम से अपनी चेतना का कायाकल्प करने का प्रयास करते है। युवा सशक्तीकरण का उद्देश्य जीवन की गुणवत्ता में सुधार करना है। युवा सशक्तीकरण प्राप्त किया जा सकता है।

युवा सशक्तीकरण युवा विकास से भिन्न है क्योंकि विकास व्यक्ति केंन्द्रित होता है, जबकि सशक्तीकरण उन उपायों से संबंधित होता हैं जो युवाओं और समुदायों के बीच स्वायत्तता और आत्मनिर्णय को बढ़ाने में मदद देते हैं जिससे ये समूह अपने अधिकार क्षेत्र में जिम्मेदारपूर्ण और अपने तरीके से अपने हितों का प्रतिनिधित्व कर सकें।

युवा सशक्तीकरण के सिद्धांत के तीन अंग है :व्यक्तिगत सशक्तीकरण : इसके तहत युवाओं या वयस्कों में कौशल को विकसित करते हुए और उनकी दक्षता में सुधार करते हुए संगठनो और समुदायों के कल्याण हेतु सहयोग करने के लिए जागरूकता विकसित की जाती है। **संगठनात्मक सशक्तीकरण** :इसमें ऐसी संस्थाअें का सशक्तीकरण किया जाता है जो युवाओं या वयस्कों को अपने जीवन पर नियंत्रण हासिल करने के लिए आवश्यक कौशल प्रदान करती है, साथ ही नीतिगत निर्णय लेते हुए उन्हें प्रभावित करती है। **सामुदायिक सशक्तीकरण** : समुदाय की बेहतरी, जीवन की गुणवत्ता को प्रभावित करने वाले खतरों के निवारण तथा स्थानीय, राज्य और राष्ट्रीय स्तर पर नागरिकों की भागीदारी के प्रयास द्वारा समुदायों का सशक्तीकरण किया जाता है।

ऐसे अनेक प्रमाण हैं जिनमें इंगित होता है कि हमारे समाज में युवा वर्ग व्यक्तिगत पसंद,पर्यावरणीय प्रभावों और जीवन शैली में बदलाव के कारण कई संचारी और गैर–संचारी विकारों से प्रभावित होते हैं। युवाओं की समस्याएं केवल सामाजिक और आर्थिक ही नहीं, मनोवैज्ञानिक भी है। पीड़ादायक संबंधों और अकेलेपन के कारण वे मादक पदार्थो और शराब के व्यसनी हो जाते हैं। युवाओं की अन्य समस्याओं में सहकर्मियों का दबाव, पारिवारिक जिम्मेदारी और काम का बोझ शामिल है। उचित परामर्श या देखभाल की कमी के चलते कई बार युवा अपने जीवन का अंत भी कर देते है। युवाओं की आम स्वास्थ्य समस्याएं जैसे–अधिक वनज और मोटापा, तनाव, चिंता और अवसाद, युवाओं में हिंसा, आत्महत्या की प्रवृत्तियाँ, तंबाकू का सेवन, शराब और मादक पदार्थो की लत, गैर–संचारी रोग आदि।

आसन और प्राणायाम विशेष रूप से शारीरिक और मानसिक स्वास्थ्य को दुरुस्त करते है। इनसे शरीर की ताकत बढ़ती है, शरीर से विषाक्त पदार्थो का खात्मा होता है, देह और मन को आराम मिलता है। तनाव दूर होता है और सिंपेथेटिक और पैरासिंपेथेटिक नर्वस सिस्टम के बीच संतुलन कायम होता है। इस प्रकार विभिन्न गैर–संचारी रोग समाप्त होते हैं। इस प्रकार आसन और प्राणायाम निम्नलिखित में सहायता करते है :तनाव और चिंता से राहत, सकारात्मक ऊर्जा और मनोदशा को बढ़ावा देना, रक्त चाप को सामान्य करने में सहायता, मांसपेशियों को चुस्त करते हुए पाचन को दुरुरस्त करना, शांति और सुख की भावना उत्पन्न करना, तनाव को दूर करना जिससे उसके गंभीर होने का खतरा कम होता है, हृदय की गति और श्वास को मंद करना, रक्तचाप सामान्य करना, आक्सीजन का अधिक कुशलता से प्रयोग, अधिवृक्क ग्रन्थियाँ (एडरेनल ग्लैंड्स) द्वारा कॉर्टिसोल कम करना, प्रतिरोधक क्षमता में सुधार आदि।

तनाव से ऑटोमॉनिक नर्वस सिस्टम असंतुलित होता है, पैरासिंथेटिक नर्वस सिस्टम कम काम करता है जबकि सिंपेथेटिक नर्वस सिस्टम अधिक काम करता है। तनाव तब महसूस होता है जब अनुभूत मांग और उस मांग को पूरा करने की क्षमता, इन दोनों के बीच तालमेल नहीं होता। इसमें बाहरी स्थितियों के प्रति भावनात्मक और मानसिक प्रतिक्रियाएँ भी शामिल होती हैं। जब कोई व्यक्ति तनावग्रस्त होता है, चाहे वह तनाव असली हो या अनुभूत, उसका नर्वस सिस्टम सिंपेथेटिक की स्थिति में आ जाता है। इस स्थिति में

एपिनेफ्राइन का स्राव कम होता है और सिंपेथेटिक नर्वस सिस्टम में गिरावट होती है लेकिन कॉर्टिकोस्टेरॉइट का स्राव सामान्य से अधिक होना जारी रहता है। ऐसे मामले में, कई बार व्यक्ति को यह महसूस भी नहीं होता कि वह तनावपूर्ण स्थिति में है।

योग से पैरासिंपेथेटिक नर्वस सिस्टम उत्तेजित होता है और ऑटोनॉमिक नर्वस सिस्टम संतुलित होता है। जब हमारे शरीर या मस्तिष्क को तनाव का खतरा होता है चाहे वह सकारात्मक या नकारात्मक, सिंपेथेटिक नर्वस सिस्टम या हमारी आपातकालीन प्रतिक्रिया प्रणाली सक्रिय हो जाती है। प्लाइट या फाइट प्रतिक्रिया का परिणाम वासोकोनट्रक्शन होता है जिससे एक्सट्रिमिटीज और पाचन तन्त्र में रक्त प्रवाह कम हो जाता है ताकि व्यक्ति जीवित रह सके।

यह भी पाया गया है कि योग से हाइपोथैलेमिक पिट्यूटरी– एड्रेनल एक्सिस (एचपीए) और सिंपेथेटिक नर्वस सिस्टम संतुलित होता है। जिससे व्यक्ति का शारीरिक और मानसिक स्वास्थ्य बना रहता है। योग से मस्तिष्क को आराम मिलता है और मन शांत रहता है जिससे रक्तचाप धड़कन और श्वसन दर कम होते हैं क्योंकि तनाव के दौरान कॉरटिसोल और एसिटाइलकोलाइन का स्तर बढ़ जाता है और योग से इनके स्तर में कमी आती हैं नतीजन, यह मनोवैज्ञानिक द्वंद, दबाव और अतिसंवेदनशीलता को कम करता है जो मनोदैहिक समस्याओं को बढ़ाते हैं यह भी पाया जाता है कि योग के कारण मैलाटोनिन के स्तर में वृद्धि होती है, मनोवैज्ञानिक और हृदय श्वसन में सुधार होता है।

योग में न केवल उचित आसनों का अभ्यास कराया जाता है और साँस लेने की तकनीक सिखायी जाती है, बल्कि इसमें संतुलित आहार पर भी जोर दिया जाता है। कभी–कभी मोटे लोगों को जोड़ों के दर्द की परेशानी होती है। योग शरीर की मुद्रा को सुधारने के साथ जोड़ों के तनाव को कम करता है और वे अधिक वजन झेलने लायक बनाते हैं। यह शरीर की ताकत और लचक तथा संतुलन को बढ़ाता है। शरीर तंदुस्त रहता है और मन शांत, तो व्यक्ति बेहतर महसूस करता है। नियमित योग करने से मोटापे से ग्रस्त व्यक्ति पर अलग ही प्रभाव पड़ता हैं। योग मोटापा काम करने की अन्य तकनीकों की तुलना में स्थायी तरीका है। मोटापा के उपचार के लिए सूर्य नमस्कार सबसे महत्वपूर्ण है सूर्य नमस्कार एक पूर्ण अभ्यास है क्योंकि इस अभ्यास का अंतःस्रावी और तंत्रिका तन्त्र।

दैनिक जीवन में योगएक पद्धति का परिचय "

Dr.Anil Kumar Yadav

Guest Faculty

Med/Mod History Dept.

University of Allahabad

हर मानव की इच्छा स्वयं से और पर्यावरण से समरस होकर जीवित रहने की है। तथापि आधुनिक युग में अधिक शारीरिक और भावात्मक इच्छायें लगातार जीवन के अनेक क्षेत्रों पर भारी हो रही हैं। परिणामत : अधिकाधिक व्यक्ति खिंचाव, चिंता, अनिद्रा जैसे शारीरिक और मानसिक तनावों से पीड़ित रहते हैं और शारीरिक सक्रियता और उचित व्यायाम में एक असंतुलन बन गया है। यही कारण है कि स्वस्थ बने रहने और उसमें सुधार के साथसाथ शारीरिक-, मानसिक और आध्यात्मिक समरसता बनाए रखने के लिए नई नई विधियों और तकनीकों का महत्व बढ़ गया है और इसी भावना से "दैनिक जीवन में योगव्यक्ति " के लिए शारीरिक और मानसिक रूप से सक्रिय करती है।

आधुनिक जीवन पद्धति और आज के लोगों के सम्मुख विद्यमान शारीरिक और मनौवैज्ञानिक समस्याओं से भलीभाँति परिचित हो गया हूँ। यह प्रणालीबद्ध और क्रमिक है जिसमें जीवन के हर मौके के लिए कुछ मूल्यवान अवसरों और जीवन के सभी क्षेत्रों को एकत्र किया है। आयु या शारीरिक बनावट का ख्याल न करते हुए प्रणाली सभी लोगों के लिए योग का श्रेष्ठ पथ खोलती है। आज के व्यक्तियों की आवश्यकताओं को समाविष्ट करने के लिए इस प्रणाली को विकसित करते समय आधुनिक समाज में मौजूद स्थितियों पर ध्यान दिया गया था। ऐसा करते समय प्राचीन शिक्षाओं के मूल स्वरूप और प्रभाव को भी अनदेखा नहीं किया गया।

"योगशब्द का उद् गम संस्कृत भा "षा से है और इसका अर्थ जोडऩा", एकत्र करना है। "यौगिक व्यायामों का एक पवित्र प्रभाव होता है और यह शरीर, मन, चेतना और आत्मा को संतुलित करता है। योग हमें दैनन्दिन की माँगों, समस्याओं और परेशानियों का मुकाबला करने में सहायक होता है। योग स्वयं के बारे में समझ, जीवन का प्रयोजन और ईश्वर से हमारे संबंध की जानकारी विकसित करने के लिए सहायता करता है। आध्यात्मिक पथ पर योग हमको ब्रह्माण्ड के स्व के साथ वैयक्तिक स्व के शाश्वत परमानंद मिलन और सर्वोच्च ज्ञान को प्रशस्त करता है। योग सर्वोच्च ब्रह्मांडमय सिद्धान्त है। यह जीवन का प्रकाश, विश्व की सृजनात्मक चेतना है जो सदैव सजग रहती है और कभी सोती नहीं; जो हमेशा थी, हमेशा है और हमेशा होगीरहेगी।-

हजारों वर्ष पहले भारत में ऋषियों ने अपनी ध्यानावस्था में प्रकृति और (बुद्धिजीवियों और संतों) ब्रह्माण्ड की खोज की थी। उन्होंने भौतिक और आध्यात्मिक शासनों के कानूनों का पता किया था और विश्व में संबंधों की अंतर्दृष्टि प्राप्त की थी। उन्होंने ब्रह्माण्ड के नियमों, प्रकृति के नियम और तत्त्वों, धरती पर जीवन और ब्रह्माण्ड में कार्यरत शक्तियों और ऊर्जाओं बाह्य संसार और आध्यात्मिक स्तर दोनों पर-ही, जांच की थी। पदार्थ और ऊर्जा की एकता, ब्रह्माण्ड का उद् गम और प्राथमिक शक्तियों के प्रभावों का वर्णन और स्पष्टीकरण वेदों में किया गया है। इस ज्ञान का पर्याप्त अंश पुनसत्य अनुभूति -खोजा गया और आधुनिक विज्ञान द्वारा उसकी पुष्टि : की गई है।

इन अनुभवों और अंतर्दृष्टियों से एक अति दूरगामी और योग नाम से ज्ञात प्रणाली प्रारम्भ हुई और उसने हमको शरीरिक स्वास्थ्य, श्वास एकाग्रचित्तता, तनावहीनता और ध्यान के लिए व्यवहारिक अनुदेश दिए हैं। इस पुस्तक में जो अभ्यास प्रस्तुत किए गए हैं, वे पिछले हजारों वर्षों में सत्य सिद्ध हुए हैं और उन्हें लाखोंकरोड़ों - लोगों ने सहायक एवं लाभदायक पाया है।

"दैनिक जीवन में योगपद्वति विश्वव्यापी योग केन्द्रों ", प्रौढ़ शिक्षा केन्द्रों, स्वास्थ्य संस्थाओं, दक्षता और खेलकूद)Fitness & Sports Clubs), पुनरुत्थापन केन्द्रों और स्वास्थ्य विहारों)Health Resorts) में सिखाई जाती है। यह सभी आयु वर्गों के लिए समीचीन, उपयुक्त है इसके लिए किसी-"करतबीबुद्धि की " आवश्यकता नहीं है और यह अयोग्य, विकलांग, बीमार और स्वास्थ्य लाभ करने वाले सभी व्यक्तियों को योगाभ्यास करने की संभावना प्रदान करती है। इसका नाम स्वयं इस बात का द्योतक है कि योग का प्रयोग किया जा सकता है और किया भी जाना चाहिए। "दैनिक जीवन में"

व्यायाम स्तरों का निर्धारण चिकित्सकों से परामर्श के बाद किए गये हैं और इस प्रकारकथित नियमों - और सावधानियों के पर्यवेक्षण के साथकिसी भी व्यक्ति द्वारा घर पर स्वतंत्र रूप से अभ्यास किया जा सकता - एक पुण्यप्रदा देने वाली प्रणाली है जिसका अर्थ है कि इसमें न केवल शारीरिक "दैनिक जीवन में योग" है।, अपितु मानसिक और आध्यात्मिक पक्षों पर भी विचार किया जा सकता है। सार्थकसकारात्मक विचार-, दृढ़ता, अनुशासन, सर्वोच्च के प्रति अभिविन्यास, प्रार्थना के साथसाथ दयालुता और समझ-, आत्मज्ञान और आत्मानुभूति का मार्ग प्रशस्त करते हैं।

"दैनिक जीवन में योग:के मुख्य लक्ष्य हैं "

- शारीरिक स्वास्थ्य
- मानसिक स्वास्थ्य
- सामाजिक स्वास्थ्य
- आध्यात्मिक स्वास्थ्य
- आत्मानुभूति या हमारे अपने अंदर दिव्यात्मा की अनुभूति

इन लक्ष्यों की प्राप्ति निम्नलिखित द्वारा होती है:

- सभी जीवधारियों के प्रति प्रेम और सहायताभाव-
- जीवन के प्रति सम्मान और प्रकृति व पर्यावरण का संरक्षण
- मानसिक शांति
- पूर्ण शाकाहारी भोजन
- शुद्ध विचार और सार्थक, सकारात्मक जीवन शैली
- शारीरिक, मानसिक और आध्यात्मिक अभ्यास
- सभी राष्ट्रों, संस्कृतियों और धर्मों के प्रति सहानुभूति, सहनशीलता

शारीरिक स्वास्थ्य

शारीरिक स्वास्थ्य का जीवन में आधारभूत मूल महत्व है। जैसा कि स्विट्जरलैण्ड में जन्मे चिकित्सक, पैरासैलसस ने बहुत ठीक कहा हैस्वास्थ्य ही सब कुछ नहीं है" :, किन्तु स्वास्थ्य के बिना सब कुछ शून्य है। स्वास्थ्य को बनाने और उसको संजोये रखने के लिए शारीरिक व्यायाम", आसन, श्वास व्यायाम प्राणायाम और) तनावहीनता, विश्राम, शिथिलता, आदितकनीकें हैं। (

"दैनिक जीवन में योगमें श्र "ेष्ठ आसनों और प्राणायामों को अष्ट स्तरीय प्रणाली में बांधा गया है जिसका प्रारम्भ से है। अन्य भाग इस (वे आसन व्यायाम जो हर व्यक्ति के लिए लाभदायक हैं) "सर्वहितासन" तैयारी स्तर के बाद आते हैं, और जो आसनों और प्राणायामों के अभ्यास से क्रमशआगे बढ़ते जाते हैं :। अनेक विशेष कार्यक्रम आधारभूत व्यायामों से विकसित किये गये हैं"पीठ दर्द के लिए योग"-, जोड़ों के लिए योग", "वरिष्ठों के लिए योग", "प्रबन्धकों के लिए योग । अच्छा स्वास्थ्य बनाये रखने के लिए"बच्चों के लिए योग" और " में अन्य महत्वपूर्ण "दैनिक जीवन में योग"व्यायाम हठयोगशुद्धिकरण की तकनीक है। इनमें गहरी तनावहीनता " भी सम्मिलित (विशेष योग तकनीक) के साथ साथ मुद्राएं और बन्ध (यथा त्राटक) एकाग्रता व्यायाम "योग निद्रा हैं।

अच्छे स्वास्थ्य के संरक्षण के लिए एक और बड़ा कारक हैवह भोजन जो हम करते हैं। जो कुछ हम खाते - हैं वह हमारे शरीर और मन, हमारे स्वभाव और गुण दोनों को ही प्रभावित करता है। संक्षेप में हम जो खाते हैं उसका प्रभाव हमारे अपने अस्तित्व पर होता है। भोजन हमारी शारीरिक ऊर्जा और जीवन शक्ति, हमारे अस्तित्व का स्रोत है। संतुलित और स्वास्थ्यप्रद भोजन में सम्मिलित हैंअनाज -, सब्जियाँ, दालें, फल, मेवे, दूध और दुग्ध पदार्थ साथ ही मधु, अंकुर, सलाद बीज, जड़ी बूटियाँ, मसाले, मूल रूप में या तुरंत तले पकाए हों। जिन भोजनों को परित्याग करना है वे हैं पुरानी बासी, पुनगरम किये हुए :, प्रकृति परिवर्तित खाद्य, मांस, सभी मांस उत्पाद और मछली और अंडे हैं। शराब, निकोटिन और मादक पदार्थों से बचना भी सर्वोत्तम है क्योंकि ये भी हमारे स्वास्थ्य को शीघ्र नष्ट कर देते हैं।

मानसिक स्वास्थ्य

सामान्यत, हम मन और इंद्रियों को नियंत्रण में रखने की अपेक्षा इनसे ही जीवन में चलते हैं। तथापि, मन पर नियंत्रण करने के लिए हमें इसे आंतरिक विश्लेषण के अधीन लाना चाहिए और इसको शुद्ध करना चाहिए। नकारात्मक विचार और आशंकाएँ हमारे नाड़ी तंत्र में और उसके द्वारा शारीरिक कार्य में एक असंतुलन पैदा करते हैं। यह बहुत सारी बीमारियों और दुख का कारण है। विचार की स्पष:्टता, आंतरिक स्वतंत्रता, संतोष और एक स्वस्थ आत्मविश्वास, मानसिक कल्याण का आधार है। यही कारण है हम क्रमिक रूप से अपने नकारात्मक गुणों और विचारों का हल करने का यत्न करते हैं और सकारात्मक विचारों और व्यवहारों को विकसित करने का लक्ष्य अपने सम्मुख रखते हैं और तदनुसार कार्य करते हैं।

"दैनिक जीवन में योगमंत्र :मानसिक कल्याण प्राप्त करने के लिए असंख्य विधियां प्रस्तुत करती है " अभ्यास, नैतिक सिद्धान्तों का पालन, सत्संग करना, मन को शुद्ध और स्वतंत्र करने के लिए प्रेरक ग्रंथों का अध्ययन। आत्मान्वेषण और आत्म ज्ञान में एक महत्वपूर्ण उपकरण आत्म विश्लेषण की "आत्म मनन ध्यान"

चरणबद्ध तकनीक है। इस ध्यान अभ्यास में हम अपने अवचेतन, हमारी इच्छाओं, जटिलताओं, आचरण के प्रकारों और पक्षविपक्ष के संपर्क में आते हैं। यह अभ्यास हमको अपनी प्रकृति-, स्वभाव तक परिचित करवा देता है। यह तकनीक हमको नकारात्मक गुणों और स्वभाव से दूर करने के योग्य बनाती है और जीवन में समस्याओं के बेहतर ढंग से प्रबंध करने में सहायता करती है।

सामाजिक स्वास्थ्य

सामाजिक स्वास्थ्य, स्वयं अपने अंदर ही खुश होने की और अन्य लोगों की खुशी बनाने, रखने की योग्यता है। इसका अर्थ है अन्य लोगों के साथ वास्तविक संपर्क व समाज में उत्तरदायित्व ग्रहण करना और समाज के हित के लिए कार्य करना। सामाजिक स्वास्थ्य का अर्थ जीवन को इसके संपूर्ण सौंदर्य में अनुभव करना और तनावहीनता में बिताना है।

हमारे युग की बढ़ती हुई समस्याओं में मादक, नशीले पदार्थों का सेवन है। यह सामाजिक बीमारी का एक साफ लक्षण है। की प्रणाली इस रोग का शमन या निरोध करने में सहायक हो सकती "दैनिक जीवन में योग" है और जनता को एक नया, सार्थक उद्देश्य और जीवन में प्रयोजन प्रदान कर सकती है। एक अच्छे, सकारात्मक सत्संग का हमारे मानस पर महान् सत् प्रभाव पड़ता है। क्योंकि ऐसा साहचर्य हमारा व्यक्तित्व और चरित्र को ढालता है और निरूपित करता है। सत्संग आध्यात्मिक विकास में अति महत्व रखता है।

"दैनिक जीवन में योगका जीवन बिताने का अर्थ अपने स्वयं के लिए और लोगों के लिए कार्य करना है। " अर्थ इसका अपने पड़ोसियों के लिए और समाज के लिए मूल्यवान और रचनात्मक कार्य करना, प्रकृति और पर्यावरण को बनाए रखना और विश्व में शांति के लिए कार्य करना है। योग का अभ्यास करने का अर्थ सार्थक सकारात्मक भावना में रहना और सभी मानव जाति के कल्याण के लिए कार्य करने में सक्रिय रहना है।

आध्यात्मिक स्वास्थ्य

आध्यात्मिक जीवन का मुख्य सिद्धांत और मानव जाति का नीति वचन, नियम है:

अहिंसापरमोधर्म -

किसी की हिंसा न करना प्रमुख सिद्धान्त है।

इस नीति वचन का, अहिंसा का सिद्धान्त, विचार, शब्द भावना और कार्य में सन्निहित है। प्रार्थना, ध्यान, मंत्र, सकारात्मक विचार और सहनशीलता आध्यात्मिक स्वास्थ्य उपलब्ध कराते हैं।

मानव को संरक्षक होना चाहिए, विध्वंसक, नाशक नहीं। जिन गुणों से हम वास्तव में मानव बनते हैं वे देने, समझने, और क्षमा करने की योग्यताएं हैं। जीवन के हर रूपों की वैयक्तिकतापृथकता- और स्वाधीनता का जीवन संरक्षण और सम्मान, योग शिक्षाओं का प्रथम अभ्यास है। इस नीति वचन का अनुसरण करने से अत्यधिक सहनशीलता, समझ, पारस्परिक प्रेम, सहायता और दयाभाव विकसित होते हैं न केवल कुछ व्यक्तियों में -, अपितु सभी मानवों, राष्ट्रों, जातियों और धार्मिक विश्वासों, मतमतांतरों के मध्य भी।-

"दैनिक जीवन में योगयह आध्यात्मिकता और -का मूल सिद्धान्त स्वतंत्रता है। योग एक धर्म नहीं है " बुद्धिमत्ता का स्रोत, सभी धर्मों की जड़ है। योग धार्मिक सीमाओं के बंधनों को दूर करता है और एकता का मार्ग दिखाता है।

"दैनिक जीवन में योगमंत्र योग और क्रिया योग के माध्यम से जीवन पथ के लिए आध्यात्मिक अपेक्षित " मार्गदर्शन प्रस्तुत करता है। धरती पर सर्वाधिक उच्च विकसित जीवनधारी होने के नाते मानव अपनी वास्तविक क लईश्वर की अनुभूति करने में सक्षम है। योग का आध्यात्मि -प्रकृति और आंतरिक स्वक्ष्य ईश्वर अनुभूति, वैयिक्तकता एवं आत्मा का ईश्वर से मिलन है। यह अनुभूति कि सब अपने मूल रूप में एक ही है और ईश्वर से संबंध रखते हैं, पहला कदम है।

Sources

- मार्शल, जॉन)1931)। *मोहेंजोदारो एंड दी इन्दुस सिविलैज़ेशन वर्ष:1922-27 के बीच मोहेंजोदारो में भारत सरकार द्वारा किए एक सरकारी खाता पुरातत्व खुदाई के होने के नाते.* दिल्ली.इन्दोलोगिकल बुक हाउस:
- मित्रा, धर्म श्री. आसन :608 योगा मुद्रा .1. एड नई वर्ल्ड लाइब्रेरी :कैलिफोर्निया .2003.
- सरस्वती, स्वामी सत्यानन्दा नवंबर .2002 (12 वें संस्करणआसन प्राणायाम मुद्रा बंधा" ।(.
- उशाराबुध, आर्य पंडित फिलोसोफी ऑफ़ .हठ योगा .2. एडपेन्नीसिलवेनिया .

  हिमालयन इंस्टीट्युत प्रेस 1977, 1985.

- Keay, John (2000). *India: A History*. New York: Grove Press.
- Michaels, Axel (2004). *Hinduism: Past and Present*. Princeton, New Jersey: Princeton University Press.
- Müller, Max (1899). *Six Systems of Indian Philosophy; Samkhya and Yoga,*
- *Naya and Vaiseshika*. Calcutta: Susil Gupta (India) Ltd.
- Taimni, I. K. (1961). *The Science of Yoga*. Adyar, भारत :The Theosophical Publishing House
- Possehl, Gregory (2003). *The Indus Civilization: A Contemporary Perspective*. AltaMira Press.
- Radhakrishnan, S.; Moore, CA (1967). *A Sourcebook in Indian Philosophy*. Princeton.

- *Bryant, Edwin (2009). The Yoga Sutras of Patañjali: A New Edition, Translation, and Commentary. New York, USA*
- *Crangle, Edward Fitzpatrick (1994), The Origin and Development of Early Indian Contemplative Practices, Otto HarrassowitzVerlag*
- *Dhillon, Dalbir Singh (1988). Sikhism, Origin and Development. Atlantic Publishers. GGKEY:BYKZE4QTGJH.*
- *De Michelis, Elizabeth (2004). A History of Modern Yoga. London: Continuum. .*
- *Dumoulin, Heinrich; Heisig, James W.; Knitter, Paul F. (2005). Zen Buddhism: a History: India and China. World Wisdom.*
- *Eliade, Mircea (1958). Yoga: Immortality and Freedom. Princeton: Princeton University Press.*
- *Feuerstein, Georg (1996). The Shambhala Guide to Yoga. 1st ed. Boston & London: Shambhala Publications.*
- *Flood, Gavin D. (1996), An Introduction to Hinduism, Cambridge University Press*
- *Fowler, Jeaneane D. (2012). The Bhagavad Gita: A Text and Commentary for Students. Sussex Academic Press.*
- *Goldberg, Philip (2010). American Veda. From Emerson and the Beatles to Yoga and Meditation. How Indian Spirituality Changed the West. New York:.*
- *Gambhirananda, Swami (1998). Madhusudana Sarasvati Bhagavad_Gita: With the annotation Gūḍhārthadīpikā. Calcutta*
- *Hari Dass, Baba (1978), Ashtanga Yoga Primer, Santa Cruz: Sri Ram Publishing,*
- *Jacobsen, Knut A.; Larson, Gerald James (2005). Theory And Practice of Yoga: Essays in Honour of Gerald James Larson.*
- *Larson, Gerald James (2008). The Encyclopedia of Indian Philosophies: Yoga: India's philosophy of meditation. MotilalBanarsidass*

किशोर सशक्तीकरण में 'योग के उपायों' का विश्लेषणात्मक अध्ययन

डॉ0 जितेन्द्र यादव
असि0 प्रोफेसर
(दर्शनशास्त्र)
हे0नं0ब0रा0स्नात0महा0
नैनी, इलाहाबाद
मों0– 9336586375
Email: jeetenyadava@gmail.com

सारांश – प्रस्तुत शोध पत्र में हम यह अध्ययन करेंगे कि किशोर सशक्तीकरण क्या है? इसमें शारीरिक, मानसिक, आध्यात्मिक विकास की क्या भूमिका है? योग क्या है और अष्टांग योग के उपाय किशोर सशक्तीकरण में किस प्रकार सहायक है हमारी शोध विधि विश्लेषणात्मक है। इस शोध पत्र में प्राथमिक श्रोत का उपयोग किया है।

कुंजी शब्द – सशक्तीकरण, अष्टांग योग

प्रस्तावना – सामान्यतया किशोरावस्था 13–19 वर्ष की मानी जाती है। इस अवस्था में शारीरिक–मानसिक परिवर्तन तेजी से होता है। किशोर का शरीर–मन एक निश्चित आकार लेने की स्थिति में होता है। किशोर को शारीरिक एवं मानसिक खुराक की आवश्यकता होती है। योग दर्शन में शरीर एवं मन दोनों को नियंत्रित एवं विकसित करने पर जोर दिया गया है। किशोरावस्था में ही यदि योग को अपना लिया जाए तो इससे शारीरिक–मानसिक विकास एवं नियंत्रण दोनों में ही आसानी होती है। उचित खानपान, व्यायाम, खेलकूद जहाँ शरीर को सशक्त बनाता है वही शिक्षा एवं संस्कृति के द्वारा मन का विकास होता है। शरीर से व्यापक मन है, मन से व्यापक व्यक्तित्व है और व्यक्तित्व से व्यापक आत्म है। योग व्यक्ति का समग्र रूप से विकास करता है। इसमें शारीरिक, मानसिक एवं आध्यात्मिक तीनों विकास सम्मिलित हैं। इनके सम्मिलित विकास के द्वारा ही किशोर सशक्तिकरण संभव है।

(1) योग की चर्चा होने पर समान्यतया आसन आदि का चित्र उभरता है, यह योग का शारीरिक पक्ष है योग का व्यापक अर्थ है– चित्त की वृत्तियों के निरोध को योग कहते हैं। चित्त की पाँच वृत्तियाँ है– प्रमाण, विपर्यय, विकल्प, निद्रा एवं स्मृति। वृत्ति–निरोध का अर्थ वृत्तियों का अभाव या नाश करना नहीं, यहाँ निरोध तिरोभाव के अर्थ में है।

योगशास्त्र में साधक श्रेणी से वृत्ति निरोध के तीन उपाय है– 1. अभ्यास और वैराग्य 2. क्रिया योग 3. अष्टांग योग

तृतीय श्रेणी सामान्य व्यक्तियों की है इसे कोई भी अपनाकर वृत्ति निरोध कर सकता है। किशोरावस्था में इसके अभ्यास से अनुशासन का विकास हो जाता है।

अष्टांग योग के आठ अंग हैं[1] – यम, नियम, आसन, प्राणायाम, प्रत्याहार, धारणा, ध्यान एवं समाधि।

यम – 'यमयन्ति निवर्तयन्तीति यमाः जो अवांछनीय कार्यो से निवृत्त कराते हैं, वे यम कहलाते हैं। यम पाँच है– अहिंसा, सत्य, अस्तेय, ब्रह्मचर्य तथा अपरिग्रह।[2]

प्राणिमात्र के प्रति किसी भी समय, किसी भी प्रकार का (कायिक, वाचिक या मानसिक) हिंसात्मक व्यवहार न करना 'अहिंसा' है। सत्य का पालन करने से असत्य निवृत्त होता है। मन एवं वचन की एकरूपता को 'सत्य' कहते हैं। 'अस्तेय' का अर्थ चोरी न करना है। ब्रह्मचर्य के द्वारा काम वासना पर संयम स्थापित किया जाता है। 'अपरिग्रह' पदार्थ संग्रह या भौतिक वस्तुओं के प्रति आसक्ति पर रोक लगाता है।

यम के नियमों के पालन करने से व्यक्ति चैतन्य के उच्च स्तर पर पहुँच सकता है, वर्तमान में व्यक्ति की मनोवृत्ति जो वाह्य वस्तुओं के बोझ से आक्रान्त है तथा भौतिक वस्तुओं के प्रति जो लिप्सा है वह इसमे नियंत्रित हो सकती है।[3]

नियम – 'नियमयन्ति प्रेरयन्तीति नियमाः' जो शुभ कार्यो में प्रवृत्त कराते हैं वे नियम कहलाते हैं। प्रवृत्तिमूलक नियम पाँच है–[4] शौच, सन्तोष, तप, स्वाध्याय तथा ईश्वर प्राणिधान। शौच आन्तरिक एवं वाह्य दो प्रकार की होती है। सन्तोष के द्वारा व्यक्ति भौतिक वस्तुओ के बजाय आध्यात्मिक वस्तुओं को प्राप्त करने की इच्छा करता है।

तप – तप शारीरिक क्रिया है। इसका साक्षात् सम्बन्ध शरीर से है, फिर भी मन की स्वस्थता के लिए शरीर की स्वस्थता आवश्यक रहती है।

स्वाध्याय– स्वाध्याय में उपनिषद, दर्शन, आत्मज्ञान सम्बन्धित ग्रन्थो का अध्ययन एवं जप सम्मिलित है। विहित अथवा अविहित सभी प्रकार के कर्मो का फलांकाक्षा के बिना परम गुरु परमात्मा में समर्पित करना 'ईश्वर–प्राणिधान' है। यह 'ईश्वर–प्राणिधान' कर्मयोग की प्रधानता के रूप में है।[5]

आसन – 'आस्यतंऽनेनेति आसनम्' इस व्युत्पत्ति के अनुसार जिस अवस्था में शरीर अपेक्षित समय तक सुख से रह सके, उसे 'आसन' कहते है। 'जितने प्रकार की जीव–जातियाँ है उतने ही प्रकार के आसन है।'[6] यम, नियम में जयी व्यक्ति ही आसन का अभ्यास कर सकता है। आसन से शारीरिक सक्रियता, मजबूती एवं लोच का विकास होता है।

प्राणायान – श्वास–प्रश्वास की अत्यन्त स्वाभाविक गति के नियन्त्रण को प्राणायाम कहते हैं।[7] प्राणायाम शारीरिक स्वास्थ्य के साथ–2 मानसिक स्वास्थ्य की प्राप्ति करता है।

प्रत्याहार – 'इन्द्रियाणि विषयेभ्यः प्रत्याहियन्ते विमुखी क्रियन्तेऽनेनेति प्रत्याहारः' इस व्युत्पत्ति के अनुसार इन्द्रियों को अपने–2 विषयों से हटाकर अन्तर्मुखी बनाना 'प्रत्याहार' है।

धारणा– किसी देश–विदेश में चित्त के स्थिरीकरण को 'धारणा' कहते हैं। धारणा से एकाग्रता का विकास होता है।

ध्यान– धारणा के देश–विदेश में जब ध्येय वस्तु का ज्ञान एकाकार रूप से होने लगता है, तब उसे 'ध्यान' कहते हैं।

समाधि– जब ध्यान ध्येय मात्र का प्रकाशक तथा अपने ध्यानाकार रूप से रहित के जैसा हो जाता है तब उसे 'समाधि' कहते हैं।

(2) किशोरसशक्तीकरण में यदि हम उपरोक्त अष्टांग मार्ग को देखें तो यह अष्टांगमार्ग किशोर सशक्तीकरण में अत्यंत महत्वपूर्ण सिद्ध हो सकता है। यम–नियम के पालन से व्यक्ति/किशोर में नैतिक अनुशासन तथा

शारीरिक शक्ति का विकास होता है। योग की सहायता से हम चैतन्य के उच्चतर स्तर पर पहुंच सकते हैं। इससे व्यक्ति/किशोर शारीरिक एवं मानसिक बाधा को पार कर लेता है।

अहिंसा, सत्य, अस्तेय, ब्रह्मचर्य तथा अपरिग्रह से किशोर में संयम आता है, वर्तमान समय में हर क्षेत्र में कड़ी प्रतियोगिता है और भौतिक वस्तुओं के प्रति तीव्र आकर्षण है। संयम से किशोर वर्तमान समय की अनेक बुराईयों से बचने में समर्थ हो सकता है।

'नियम' के अन्तर्गत आने वाले शौच, सन्तोष, तप, स्वाध्याय तथा ईश्वर प्राणिधान से व्यक्ति/किशोर के अन्दर आन्तरिक संतुष्टि आती है इससे उसकी उर्जा का क्षय नहीं होता क्योंकि वह अपने लक्ष्य के प्रति समर्पित होना सीखता है, हर वस्तु के पीछे भागने से बचता है। स्वाध्याय के द्वारा जो गुण विकसित होता है उससे व्यक्ति/किशोर अपने लक्ष्य को पाने के लिए आवश्यक सूचनाएँ इकट्ठा करता है उनका विश्लेषण करता है और उनके प्रति श्रद्धा रखकर समर्पित रहता है। ईश्वर प्राणिधान व्यक्ति्/किशोर में कर्मयोग की भावना का विकास करता है जिसमें व्यक्ति/किशोर अपने लक्ष्य में असफल होने पर अवसाद से ग्रसित नहीं होता है। अवसाद/चिड़चिड़ापन आज के किशोरों में एक समस्या के रूप में देखी जा रही है। किशोरों के ऊपर परीक्षा/प्रतियोगिता का अत्यंत दबाव है इन दबावों को झेलने की क्षमता–यम–नियम के अभ्यास से विकसित होती है।

'आसन' के अभ्यास से किशोरों की शारीरिक क्षमता बढ़ती है और अनेक ऐसे रोगों से बचाव होता है जो कि शरीर के गलत मुद्रा अपनाने से होते हैं। किशोरावस्था में इसका अभ्यास प्रारम्भ करने से अधिक फायदा होता है।

'प्राणायाम' से शरीर में आक्सीजन की पूर्ति पूर्ण होती है श्वास–प्रश्वास की गति नियमित बनती है जिससे फेफड़े एवं नाड़ी सम्बन्धी बीमारी नहीं होती और शरीर स्वस्थ रहता है। प्राणायाम अवसाद, तनाव को दूर कर एकाग्र होने की क्षमता का विकास करता है।

प्रत्यायाहार का अभ्यास किशोर को अन्तर्मुखी बनाता है। अन्तर्मुखी का तात्पर्य अपनी क्षमताओं को संगठित करना उनका विकास करना, यह वाह्य विषयों पर निर्भरता कम करता है। इससे किशोर भावनात्मक रूप से आत्मनिर्भर बन सकता है जो कि किशोर सशक्तीकरण का अनिवार्य घटक है।

धारणा, ध्यान, समाधि ये सभी किशोर को एकाग्र एवं लक्ष्य के प्रति समर्पित होने का अभ्यास कराते हैं। इनके अभ्यास से किशोर के व्यक्तित्व में एकरूपता, दृढ़ता आती है।

योग स्वीकारता है कि मानसिक अवस्थाओं का आवश्यक दमन अभ्यास तथा इच्छाओं पर विजय प्राप्त करके किया जाता है। डॉ0 राधाकृष्णन लिखते हैं[8] कि योग शरीर तथा मन के घनिष्ठ सम्बंध पर बल देता है। शारीरिक स्वास्थ्य मानवीय जीवन का लक्ष्य नहीं है। लेकिन यह इसकी अनिवार्य दशा है। मनुष्य ऐसा यंत्र नहीं है जिसमें आत्म बाहर से लाकर जोड़ी गयी हो जैसा पाश्चात्य दार्शनिक रेने देकार्त ने प्रयास किया था।

किशोर सशक्तीकरण के लिए आवश्यक शारीरिक, मानसिक एवं आध्यात्मिक विकास योग के उपायों द्वारा संभव है। वर्तमान में किशोर अनेक तनाव एवं मानसिक समस्याओं से जूझ रहे हैं इनसे जूझने की शक्ति योग प्रदान करता है। पतंजलि योगदर्शन की धारणा है कि व्यक्ति जीवन की समस्त विधियों से सम्पन्न है, जिनसे बहुत कुछ प्राप्त किया जा सकता है। मनुष्य का जीवन चित्त के स्वभाव पर निर्भर करता

है यह मनुष्य पर निर्भर करता है कि वह चित्त को नियंत्रित करके अपने स्वभाव में परिवर्तन कर लें। विश्वास और एकाग्र से व्यक्ति अपनी बुराईयों से भी मुक्त हो सकता है।[9]

मानवीय दृष्टि की साधारण सीमाएं विश्व की सीमाएँ नहीं है। भौतिक प्रकृति की शक्तियों के अतिरिक्त अन्य शक्तियाँ भी है। यदि व्यक्ति को अपने ऊपर विश्वास है तो अति प्राकृतिक शक्ति भी उसकी हो सकती है।

निष्कर्ष – योग के उपाय विशेषकर अष्टांग योग किशोर सशक्तीकरण में महत्वपूर्ण सिद्ध हो सकता है। यह शारीरिक शक्ति, मानसिक शक्ति के साथ–2 व्यक्ति को आध्यात्मिक एवं नैतिक बनाता है। इससे किशोर अपने तनाव, अवसाद चिड़चिड़ापन को कम कर सकता है। अमेरीका जैसे विकसित देश में अक्सर किशोरों द्वारा स्कूल में बच्चों की हत्या की खबर यह सिद्ध करती है कि केवल भौतिक सशक्तीकरण किशोर सशक्तीकरण के लिए पर्याप्त नहीं है, योग किशोर सशक्तीकरण में आध्यात्मिक–नैतिक आयाम जोड़कर इसे पूर्ण बनाता है।

सन्दर्भ –

1. योग सूत्र 2/1
2. योग सूत्र 2/30
3. डॉ0 राधाकृष्णन, भारतीय दर्शन, राजपाल एंड संस, नई दिल्ली, संस्करण 2015, पृ0–303
4. योग सूत्र 2/25
5. योग वार्तिक, पृ0–249
6. योग वार्तिक, पृ0–267
7. योग 2/50
8. डॉ0 राधाकृष्णन, भारतीय दर्शन, राजपाल एंड संस, नई दिल्ली, संस्करण 2015, पृ0–304
9. डॉ0 राधाकृष्णन, भारतीय दर्शन, राजपाल एंड संस, नई दिल्ली, संस्करण 2015, पृ0–320

युवाओं के व्यक्तित्व निर्माण में योग की भूमिका– डॉ0 कल्पना सिंह, एसोसिएट प्रोफेसर समाजशास्त्र, महाराजा बिजली पासी राजकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय आशियाना, लखनऊ।

सारांशः–उपचार, स्वास्थ्य एवं स्वथ्य जीवन की औषधि रहित वैज्ञानिक पद्धति है जिसका धार्मिक तथा अध्यात्मिक दृष्टि से अत्यधिक महत्व है। योग उपचार, स्वास्थ्य एवं शारीरिक व मानसिक रोगों के विषय में अपने विभिन्न सिद्धान्त व अवधारणाएं रखता है। योग स्वास्थ्य के प्रति सर्वमान्य दृष्टिकोण पर बल देता है जिसमें जीवन के दैहिक, मानसिक, नैतिक, सामाजिक, भावात्मक तथा अध्यात्मिक पक्ष सम्मिलित हैं।

योग वर्तमान में युवाओं के लिये आवश्यकता बन गया है। योग की विभिन्न क्रियाओं जैसे ध्यान, प्राणायाम, आसन, सूर्य नमस्कार द्वारा युवाओं को स्वास्थ्य सम्बन्धी समस्याओं से मुक्ति दिलाने तथा राष्ट्र की प्रगति में सहभागी बनने का अवसर प्रदान करने वाला माध्यम है। योग सकारात्मक स्वास्थ्य तथा घर व समाज के अन्तर्वैयक्तिक सम्बन्ध सुधारने में सहायक सिद्ध हो रहा है।

मुख्य शब्द : योग, अध्यात्मिक, अन्तर्वैयक्तिक, सकारात्मक स्वास्थ्य।

उद्देश्यः

1. योग, युवा तथा स्वास्थ्य किस प्रकार एक दूसरे से अन्तर्सम्बन्धित है इस पक्ष को स्पष्ट करता है।
2. योग व्यक्ति, घर समाज व पर्यावरण के मध्य सम्बन्ध को स्पष्ट करता है।
3. योग की हिन्दू धर्म तथा विज्ञान में किस प्रकार के सिद्धान्त व अवधारणायें है? ये जानने का प्रयास किया गया है?

अध्ययन : प्रस्तुत अध्ययन में वर्णनात्मक शोध अभिकल्प का प्रयोग किया गया है व ऐतिहासिक पद्धति द्वारा इसके धर्म साहित्य में महत्व, दर्शन, प्रासंगिकता को समझने का प्रयास किया गया है।

प्रस्तावनाः– वर्तमान समय में योग विश्व भर में लोकप्रिय है इसने क्षेत्र, धर्म, जाति, समुदाय और राष्ट्रीयता की सीमाएं पार कर ली हैं। इसको स्वास्थ्य संवर्द्धन, रोग निवारण में इसकी विशिष्ट भूमिका के कारण एवं जीवनशैली से जुड़ी विभिन्न समस्याओं पर प्रभावपूर्ण नियन्त्रण रखने में इसकी उपचारात्मक भूमिका के कारण विश्वभर में जाना जाता है। योग आध्यात्मिक विषय भी है, जो शरीर एवं मस्तिष्क के बीच पूर्ण सामंजस्य बिठाने पर बल देता है।

आज के युग को तकनीकी प्रगति के लिये जाना जाता है, जिससे हमारा जीवन आरामदेह बन गया है किन्तु गलत जीवन शैली, पर्यावरणीय स्थितियों, प्रदूषण, आधुनिक कार्य संस्कृति आदि ने जीवन को कठिन बना दिया है। इसने जीवन के सभी आयामों अर्थात् शारीरिक, मानसिक, बौद्धिक, भावात्मक, सामाजिक एवं आध्यात्मिक आयामों पर समस्यायें उत्पन्न कर दी हैं, जिससे व्यक्ति पूर्ण रूप से भ्रमित हो जाता है। योग जीवन के सभी क्षेत्रों में सही दिशा प्रदान करता है। योग की विशिष्टता यह है कि वह स्वास्थ्य सेवा की किसी भी प्रणाली के साथ चल सकता है। इस कारण अन्य चिकित्सा पद्धतियों तथा पारंपरिक चिकित्सा के विशेषज्ञ रोगियों को योग चिकित्सा का परामर्श देते हैं।

संयुक्त राष्ट्र ने लगभग 177 देशों के समर्थन के साथ 21 जून को अंतर्राष्ट्रीय योग दिवस घोषित कर दिया। वर्तमान में संपूर्ण विश्व पूरे उत्साह एवं उमंग के साथ अन्तर्राष्ट्रीय योग दिवस को मना रहा है। भारत में आयुष मंत्रालय को अन्य मंत्रालयों के उपयुक्त एवं सक्रिय सहयोग के साथ अन्तर्राष्ट्रीय योग दिवस मनाने का दायित्व दिया गया है।

हिन्दू धर्मशास्त्रों में धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष – इस चतुष्टय की सिद्धि के लिये सर्वतोभावेन् शरीर का स्वस्थ एवं निरोग होना आवश्यक है। रोगों से आक्रान्त शरीर के द्वारा कोई भी पुरुषार्थ सिद्ध नही किया जा सकता है और न ही मनुष्य वांछित सफलता प्राप्त कर सकता है। लौकिक दृष्टि से हो या आध्यात्मिक दृष्टि से अपने लक्ष्य की साधना के लिये अथवा गन्तव्य तक पहुँचने के लिये मनुष्य को स्वस्थ मन तथा स्वस्थ शरीर की नितान्त आवश्यकता है। स्वास्थ्य जीवन की एक महत्वपूर्ण निधि है। शरीर के उचित पोषण एवं रोगनिवारणार्थ सम्यक् आहार–विहार का होना आवश्यक है। आहार द्वारा शरीर पोषण की प्रक्रिया अग्नि पर निर्भर है। आहार ग्रहण के उपरान्त उसका पाचन, शोषण एवं चयापचय आदि सभी क्रियाएं जठराग्नि के द्वारा होती है। अतएव अग्नि का सम होना आवश्यक है। हितकर आहार को 'पथ्य' तथा अहितकर आहार को 'अपथ्य' कहा गया है। पथ्याहार ही शारीरिक विकास का कारण बनता है, जबकि अपथ्याहार व्याधि का कारण। आज के परिवर्तनशील युग में आयुर्वेद प्रणीत जीवनशैली की अवहेलना, अनेक रोगों का कारण बनी है।

पथ्य आहार के अर्न्तगत आयुर्वेद में निम्नलिखित पदार्थो को सम्मिलित किया है, पूर्ण विश्राम, प्रचुर शर्करा युक्त तरल भोजन, नींबू का शर्बत, गन्ने का शुद्ध व ताजा रस, अदरक, काली मिर्च, हरा धनिया, लौकी, परवल, मूली, गाजर, टमाटर, पपीता, चुकन्दर का सेवन मौसमी फल, अंजीर, मुनक्का, किशमिश, सन्तरा, मौसम्बी आदि फलों का रस, मूंग, मसूर की छिल्कायुक्त दालें व गो दुग्ध से बना पनीर व छेना। अपथ्य आहार में परिश्रम, व्यायाम एवं मानसिक तनाव, मदिरायान, आधुनिक फास्ट फूड, गरिष्ठ एवं अधिक चिकनाईयुक्त भोजन, लाल मिर्च गर्म मसाले एवं तेजनमकीन पदार्थ।

ऐसा कहा जाता है कि पथ्य पालन करने वाले रोगी का रोग औषधि सेवन के बिना भी ठीक हो जाता है जबकि पथ्यहीन रोगी के रोग, सैकड़ों औषधियों के सेवन से भी सरलता से ठीक नहीं हो पाते। यदि पथ्य पालन किया जाये, तो औषधि सेवन की कोई आवश्यकता नहीं होती। पश्य पालन नहीं करने वाला यदि औषधि का भी सेवन करता है तो यह औषधि सेवन अर्थहीन हो जाता है।

योग एक आध्यात्मिक विज्ञान है, योग सर्वांगीण जीवन पद्धति है, जिसकी जड़े भारत की परम्परा एवं संस्कृति में गहनता से व्याप्त हैं। मध्यकालीन, आधुनिक एवं सामाजिक साहित्य में भी योग के समृद्ध भंडार प्राप्त हुए हैं। पंतजलि का योगसूत्र पहला व्यवस्थित ग्रंथ माना जाता है। पतंजलि ने योग का आठ अंगों वाला मार्ग बताया है, जिसे अष्टांग योग कहते है। यह अष्टांग योग व्यक्ति के सभी पक्षों का ध्यान रखता है।

योग मनुष्य की परिवर्तित हुई स्वास्थ्य सम्बन्धी आवश्यकताएँ पूर्ण करने के लिये शोधकर्ता एवं साधक अब योग पद्धतियों का व्यापक प्रयोग कर रहे हैं। योग पर वर्तमान समय में पूरी दुनिया का ध्यान जा चुका है। स्वास्थ्य की रक्षा एवं संवर्द्धन के लिये ही नहीं बल्कि विभिन्न रोगों पर नियन्त्रण के लिये भी जीवन के विभिन्न क्षेत्रों के लोगों में योग पद्धतियों के प्रति जागरुकता बढ़ी है। तनाव के कारण उत्पन्न होने वाली व्याधियों एवं मनोदैहिक विकारों के निवारण एवं नियन्त्रण के लिए विभिन्न योग गुरु और चिकित्सा पेशेवर योग से जुड़ी जीवन शैली के कार्यक्रम चलाते आ रहे हैं।

योगाभ्यास से स्वास्थ्य बढ़ता है, रोगों का निवारण होता हैं, मनोदैहिक विकारों पर प्रभावी नियन्त्रण होता है और चेतना के उच्च स्तर की बेहतर समझ बनती है। योग प्रणाली का दृष्टिकोण सर्वांगीण है और यह व्यक्ति का संपूर्ण उपचार करने में विश्वास करती है। योग की लोकप्रिय पद्धतियां, क्रियाएं, सूर्य नमस्कार, आसन, प्राणायाम, विश्राम की विधियां, बंध एवं मुद्राएं, ध्यान आदि हैं।

योग को स्वस्थ जीवन का विज्ञान एवं कला माना जाता है। यह उस प्रत्येक व्यक्ति के लिये है, जो स्वस्थ रहना चाहता है और रोगों से दूर रहना चाहता है, वास्वत में योग से अन्य लाभों के अतिरिक्त आंतरिक कौशलों का विकास होता है और आत्मविश्वास का स्तर भी बढ़ता है। इसे जीवनशैली का पूर्ण परिवर्तन कहा जाता है।

योग अब युवाओं के लिये आवश्यकता बन चुका हैं चाहे शिक्षा हो या रोजगार, युवा अपने जीवन में अनेक चुनौतियों का सामना कर रहें हैं। योग उन्हें दैनिक जीवन की चुनौतियों का कुशलतापूर्वक सामना करने वाले वास्तविक योगी में बदल सकता है। योग व्यक्तित्व के सभी पहलुओं अर्थात् शारीरिक, मानसिक, सामाजिक, नैतिक, भावनात्मक एवं आध्यात्मिक पहलुओं का एक साथ विकास करता है तथा अंत में व्यक्ति को एक अलग व्यक्ति में बदल देता है। यह पूर्ण समाज पर प्रभाव डालता है। एकाग्रता एवं धर्य बढ़ाता है तथा साधक को शान्तचित्त एवं गंभीर बनाता है, जो आज के दैनिक जीवन में अत्यन्त आवश्यक है।

भारत 125 करोड़ से अधिक जनसंख्या वाला विशाल देश है और देश का विकास मुख्यतया उसके स्वास्थ्य पर ही निर्भर करता है। यदि देश का स्वास्थ्य खराब होगा तो उसकी प्रगति धीमी पड़ सकती है। दूसरी ओर यदि देश के युवाओं का स्वास्थ्य अच्छा तथा सुदृढ़ होगा तो देश दीर्घकाल तक विकास के पथ पर अग्रसर होगा। इसलिये युवाओं का स्वास्थ्य अत्यन्त महत्वपूर्ण है।

योग स्वस्थ जीवन का विज्ञान होने के साथ ही आध्यात्मिक विज्ञान भी है। इसमें रोग प्रतिरोध तथा स्वास्थ्य संवर्द्धन दोनों की क्षमता है। योग की सर्वांगीण प्रकृति जीवन के सभी क्षेत्रों में तारतम्य स्थापित करती है तथा हमारे दैहिक जीवन को भी प्रभावित करती है। इसके नियमित अभ्यास से व्यवहार एवं दृष्टिकोण में सकारात्मक परिवर्तन होता है। विश्वभर में हुए विभिन्न वैज्ञानिक अनुसंधानों में योग के चिकित्सा सम्बन्धी लाभों का भी पता चला हैं शारीरिक एवं मनोदैहिक विकारों समेत जीवनशैली से सम्बन्धित अनेक विकारों के निवारण तथा नियन्त्रण की अपनी शक्ति के कारण आज योग एक बार पुनः लोकप्रिय हो रहा है।

निष्कर्षः–योग को वर्तमान में एक सुगम उपचार पद्धति के रुप में स्वीकार कर लिया गया है। दैनिक जीवन में जीवनशैली सम्बन्धी सकारात्मक परिवर्तनों के माध्यम से इन रोगों से बचा सकता है। उपवास चिकित्सा, खाद्य आहार, चिकित्सा मृदा चिकित्सा, जल चिकित्सा, मालिश, वायु चिकित्सा जैसी प्राकृतिक चिकित्सा पद्धतियों के साथ षट्कर्म, आसन, सूर्य नमस्कार, प्राणायाम, ध्यान जैसी योग क्रियाएं रोगमुक्त स्वस्थ एवं सुखी जीवन सुनिश्चित करती है।

अतः योग युवाओं को स्वास्थ्य सम्बन्धी समस्याओं से मुक्त करने वाला एवं राष्ट्र की प्रगति में सहभागी बनने का अवसर देने वाला माध्यम है। योग सकारात्मक स्वास्थ्य को बढ़ावा देता है एवं सकारात्मक दृष्टिकोण उत्पन्न करता है। योग क्रियाएं शरीर तथा मस्तिष्क को पूर्णतया स्वस्थ एवं एकाकार बनाने का प्रभावशाली माध्यम हैं।

सन्दर्भ सूचीः

1. Economic Survey Report 2016-17.
2. युवा भारत की नई पहचान, एन राघुरामन, प्रभात पब्लिककेसन्स।
3. Encyclopaedia of Social work in India Volume 4, 1987.
4. The Yoga of Action, Karma Yoga: Swami Vivekanand
5. यूथ द वाइस ऑक इंडिया : रूप बसन्त रागा, ठाकुर रागा, डायमंड बुक्स।

भारतीय युवा और असंतोषात्मक आन्दोलन

डॉ जयराम त्रिपाठी
प्रवक्ता (हिन्दी)
राजकीय स्नात्कोत्तर महाविद्यालय
नैनी, इलाहाबाद |

प्रस्तावना

भाषा, धर्म, जाति, वंश, लिंग, आयु आदि को लेकर हमारे देश में अनेक रूढ़ियाँ, भेदभाव एवं अन्धविश्वास अभी भी विद्यमान हैं । ऐसी विसंगतियों को बनाये रखने का उत्तरदायिल वस्तुतहमारे देश की अनेक महान छवियों को जाता है :, जो देश एवं समाज को खोखला करती हैं ।महान छवियों से तात्पर्य यहाँ पर कोई विचारक, विद्वान, नेता, राजनीतिज्ञ अथवा राजनेताओं से नहीं अपितु समाज में प्रतिष्ठित ऐसे महानुभवों से है जो अपने को दूसरों से सदैव ही श्रेष्ठ समझते हैं, भले ही वह संक्कार विहीन ही । एक ऐसी ही छवि प्रायरे देश के युवाओं की भी है । उनकी रूढ़िबद्ध छवहमा :ि यह है कि वे उग्रवादी, विद्रोही क्रान्तिकारी, विवेकहीन, अपरिपक्व, एवं रूढ़िवादी होते हैं| यह सही है कि युवावर्ग बाहरी प्रभावों के प्रति अतिसंवेदनशील होते हैं और दूसरों की नकल हमेशा करते हैं । किन्तु इसका तात्पर्य यह कदापि नहीं कि युवा वर्ग हमेशा ही विद्रोही, आक्रमणकारी, विध्वंसक, विवेकहीन, अपरिपक्व, रूढ़िवादी एंब आतंकवाद में बिश्वास रखता है| महत्वपूर्ण शब्द युवा -:, राजनीति, असमानता, समाज, नैतिकता,सहयोग ।

उद्देश्य आज के समय मैं युवा पीढ़ी में अपने समाज -:,सरकार, संस्कृति, परंपराओ, इत्यादि के प्रति असंतोष बढ़ता ही गया रहा है, इस कारण समाज में भय का वातावरण व्यप्त है। युवाओ के असंतोषात्मक आन्दोलन लगातार होते रहते है ।आज इन आंदोलनों के पीछे की सोच तथा विज्ञान को समझने और इन समस्याओं का निवारण इस लेख के माध्य्म से खोजने का प्रयास किया गया है।

जब सामाजिक स्यवस्था में व्याप्त विरोधाभास, राजनीति में उत्पन्न भ्रष्टाचार, आर्थिक असमानताओं के कारण सभी व्यक्तियों में देश एवं समाज के प्रति मोहभंग हो जाता है तो वह किसी न किसी रूप में विद्रोही हो ही जाता है, तो ऐसी स्थिति में युवाओं

से ही क्यों आशा की जाती है कि वे ही पारम्परिक नैतिक मूल्यों एवं आदर्शों के अनुसार चलें ।

युवा जब देखते हैं कि समाज की प्रत्येक संस्था चाहे वह शैक्षणिक हो, राजनैतिक, सामाजिक, अथवा अस्थिंक हो उनकी कथनी व करनी में एक चौड़ी खाई है तो उनके भीतर असन्तोष उत्पन्न हो जाता है और यही असन्तोष उनके द्वारा किये जाने वाले उत्तेजनापूर्ण आन्दोलनों के रूप में परिवर्तित हो जाता है।

अतयुवाओं में इन उत्तेजनापूर्ण आन्दोलनों को नियन्त्रित एवं कम करने के लिए : पिताओं-माता, शैक्षणिक संस्थाओं, राजनीतिज्ञ, नेताओं और प्रशासन व्यवस्था आदि सभी का पर्याप्त सहयोग अति आवश्यक है ताकि उनके अन्दर आशा, विश्यास, उत्साह, साहस, जागृति, आपसी प्रेमसहयोग आदि की भावना पैदा हो सके ।- कोई भी इतना बेवकूफ और पागल नहीं होता जो बेवजह स्वयं को, अपने परिवार को, समाज को एवं देश को हानि पहुँचाये । प्रत्येक गलत अथवा सही कार्य के पीछे कोई न कोई कारण अवश्य होता है । युवाओं द्वारा व्यक्त किये जाने वाले असन्तोष एवं आन्दोलन के पीछे भी अनेक कारण हैं ।

युवाओं के आन्दोलनों को नियन्त्रित किया जा सकता है । आवश्यकता एकजुट होने की है । परस्पर सहयोग, सद्भावना, सहिष्णुता, आदर, प्रेम, नैतिक मूल्यों एवं आदर्शों को युवाओं में पैदा करने की है । तभी देश का सामाजिक, अत्विक एयं राजनीतिक विकास समन्वित रूप से हो सकता है ।

असन्तोष किसे कहते हैं ? असन्तोष क्या है ? राजनैतिक असन्तोष किसे कहते हैं ? आर्थिक असन्तोष किसे कहते हैं ? सामाजिक असन्तोष क्या है अथवा छात्र असन्तोष क्या है ? इत्यादि प्रश्नों का एक ही उत्तर हैंअशान्त स्थिति । यह अशान्त स्थिति फिर - चाहे किसी भी क्षेत्र में हो । यह स्थिति वास्तव में मोहभंग और नाराजगी की स्थिति होती है यदि एक विश्वविद्यालय के विद्यार्थियों में असन्तोष है तो उसे छात्र आन्दोलन की समस्या के रूप में नहीं लिया जाएगा अपितु जब सम्पूर्ण देश में विद्यार्थी शिक्षण-प्रशिक्षण संस्थाओ में प्रवेशो, पाठ्यक्रमों, परीक्षा प्रणाली और शैक्षिक समितियो प्रतिनिधित्व आदि जैसे सामूहिक मामलों पर कुंठित होते है तब हम कहते हैं कि युवाओ में सन्तोष की समस्या है।

इसी प्रकार सामाजिक, आर्थिक एवं राजनैतिक क्षेत्रों में भी असन्तोष ही स्थिति उत्पन्न हो जाती है, किन्तु सभी क्षेत्रों में असन्तोष के कारण भिन्नभिन्न होते हैं । युवा - समाज में युवाओ द्वारा असन्तोष की परिभाषा इस प्रकार की जा सकती है कि द द यह पामूहिक कुण्ठा की अभिव्यक्ति है।

छात्रों में व्याप्त असन्तोष ही छात्र आन्दोलन का कारण बनता ट्रे । युवा असन्तोष तीन रूपों में देखा जा सकता है; (1) युवाओं में असन्तोष, (2) युवाओं के कारण प्रशान्ति, (3) देश में सामाजिक अशान्ति और उसका युवाओं पर प्रभाव । वास्तव में असन्तोष अन्याय ते प्रति घृणा की अभिव्यक्ति है । सामाजिक विरोध और प्रतिवाद एक ऐसे विचार अथवा व्यवहार नीति की अस्वीकृति की अभिव्यंजना है जिसे रोकने या टालने में एक व्यक्ति शक्तिहीन होता है ।

यह प्रत्यक्ष कार्यवाही न होकर असन्तोष व्यक्त करने का एक तरीका है । सामाजिक विरोध के महत्वपूर्ण तत्व हैं; (1) कार्यवाही किसी शिकायत को व्यक्त करती है, (2) यह अन्याय के प्रति दृढ विश्वास को इंगित करता है, (3) विरोधी सीधे ही अपने प्रयत्नों से इस स्थिति को नहीं सुधार सकते हैं, (4) कार्यवाही लक्षित समूह को सुधारक कदम उठाने के लिए उकसाती है और)5) विरोधी लक्षित समूह को प्रेरित करने के लिए बल प्रयोग, समझानाबुझाना-, सहानुभूति और डर के सम्मिश्रण का प्रयोग करते हैं।

सामाजिक विरोध के कारण ही आक्रमण और आन्दोलन हो सकते हैं । यह आक्रमण अकारण हमला है । यह वह व्यवहार है जिसका उद्देश्य किसी व्यक्ति को चोट अथवा हानि पहुंचाना है । जहाँ तक उत्तेजनापूर्ण आन्दोलन का प्रश्न है तो इसका उद्देश्य शिकायत और अन्याय को सत्तारूढ व्यक्तियों के ध्यान में लाना होता है । यह सत्ताधारियों को सचेत करने, प्रभावित करने, उत्तेजित करने, चिन्तित करने और घबरा देने के लिये किया जाता है।

उत्तेजनापूर्ण आन्दोलन में दबावसमूह के दावपेज हमेशा होते हैं-, परन्तु सामाजिक आन्दोलन में वे हो भी सकते हैं और नहीं भी । वस्तुतछात्र आन्दोलन एक ऐसा व्यवहार : पहुँचाना नहीं होता देश्य किसी को हानि अथवा चोटहै जिसका उद्, वरन् यह एक सामाजिक विरोध है ।

यह न तो अन्तर्जात विध्वसक प्रवृत्ति है और न ही कुण्ठाओं के प्रति अन्तर्जात प्रतिक्रिया । इसे सीखना पड़ता है । युवा उत्तेजनापूर्ण आन्दोलन के कई रूप हैं; प्रदर्शन, नारेबाजी, हडताल, भूखहडताल-, रास्ता रोको, घेराव, परीक्षा का बहिष्कार आदि।

उत्तेजना से परिपूर्ण छात्र आन्दोलन हिसंक एवं अहिंसक दोनों ही तरह के हो सकते है । 1988 में भारत में 5,838 विद्यार्थी उत्तेजक आन्दोलनों में से केवल 18 प्रतिशत हिंसक थे, जबकि 1987 में 15 प्रतिशत उत्तेजनापूर्ण आन्दोलन, 1986 में 43 प्रतिशत, और 1985 में 19.0 प्रतिशत हुये ।इसके अतिरिक्त 1988 में विद्यार्थियों के उत्तेजनापूर्ण आन्दोलनों में से 560 प्रतिशत गैरशैक्षिक विषयों से-, और 25.0 प्रतिशत बस के किराये अथवा साम्प्रदायिक तनाव से सम्बधित थे । उत्तर भारत के कई विश्वविद्यालयों और महाविद्यालयों में अगस्त और सितम्बर, 1990 में आरक्षण के मामले पर विद्यार्थियो के उतेजनापूर्ण आन्दोलनों की समस्या उठ खडी हुई थी और वे लगभग दो महीने बंद रहे ।

गुजरात में 1985 में आरक्षण विरोधी उत्तेजनापूर्ण आन्दोलन हुआ, असम मे 1984 मे हुआ। पंजाब में खालिस्तान के लिए उग्रवादियों का उत्तेजनापूर्ण आन्दोलन तथा जम्पू और कश्मीर में स्वतन्त्र कश्मीर के लिए और बिहार में झारखण्ड राज्य के लिए जनजातियों की मांग भी सम्बंधित सच्चा में युवाओ की कुण्ठा के रूप में समझी जा सकती है।

यह आवयश्क नहीं कि छात्र आन्दोलन सदैव ही दमनकारी अथवा हिसंक होते हैं । वे कई बार प्रत्ययकारी तकनीक का भी उपयोग करते हैं । छात्र असन्तोष अथवा आन्दोलन के कई प्रकार हैं । जैसे; प्रथम, प्रत्ययकारी उतेजनापूर्ण आन्दोलन । यहाँ युवा छात्र सतारूढ़ व्यक्तियों के साथ बैठकर अपनी समस्याओं पर उनसे चर्चा कर उनकी प्रतिक्रियाओं को परिवर्तित करने का प्रयास करते है और अपने दृष्टिकोण पर उनकी सहमति के लिए दबाव डालते हैं ।

इसका दायरा कम महत्वपूर्ण विषयों परीक्षाओं को आगे सरकाना), प्रवेश तिथि को आगे बढ़ानाशैक्षिक समितियों में प्रतिनिधित्व देना) से लेकर महत्वपूर्ण विषयों (, विद्यार्थियों को निर्णयात्मक प्रक्रियाओं के साथ सम्बद्ध करनादोनों तक होता है (।द्वितीय, विरोधात्मक उत्तेजनापूर्ण आन्दोलन । इन आन्दोलनों का मुख्य उद्देश्य सत्तारूढ़ व्यक्तियों को अपने दायरें में रखना होता है । अधिकारी वर्ग द्वारा किये गये कई परिवर्तन युवाओं एवं छात्रों को परेशान करने वाले होते हैं और उन्हें लगता है कि

उनके कई बहुमूल्य वर्ष व्यर्थ में गंवाए जा रहे हैं, या उनके न्यायसंगत अवसरों से उन्हें वंचित किया जा रहा है या उनकी जीविकाओं पर खराब असर पड़ने वाला है ।

उदाहरणार्थ, विश्वविद्यालय को इस निर्णय का कि उत्तरपुस्तिका के पुनर्मूल्यांकन पर घटा कर अंक दिये जायें तो विद्यार्थियों ने उत्तेजनापूर्ण आन्दोलन करके इसका विरोध किया फलस्वरूप शैक्षिक परिषद को अपना यह निर्णय बदलना पड़ा ।

तृतीय, क्रान्तिकारी उतेजनापूर्ण आन्दोलन । इसका उद्देश्य शैक्षणिक एवं सामाजिक व्यवस्था में व्यापकस्तरीय परिवर्तन लाना होता है । उदाहरणार्थ, अधिकारियों को बाध्य किया जाता हे कि विद्यार्थी को अनुत्तीर्ण न कर उसे आगे की कक्षाओं में चढ़ा दिया जाये आदि ।

इन सभी आन्दोलनों में प्रायवही छात्र भाग लेते हैं जो अपने को समाज से कटा : अनुभव करते हैं एवं अलगाव का अनुभव करते हुआ हैं, जो जीवन में सन्तोषजनक भूमिका प्राप्त करने में असफल रहते हैं, जिनके अपने परिवारों से घनिष्ठ सम्बंध नहीं होते, वे युवा जो अपनी जाति, धर्म एवं भाषा आदि को स्वीकार नहीं करते और असुरक्षित, अप्रसन्न चिन्तित रहते हैं, प्रवासी युवाओं को किसी बड़े समुदाय से जुड़ने के अवसर प्राप्त नहीं होते । अतउन्हें उत्तेजनापूर्ण आन्दोलनों से जुडने का अवसर प्राप्त होता है । :

यदि उतेजनापूर्ण आन्दोलनों में भाग लेने वाले युवाओं की संख्या कम है तो वह अधिक दिन नहीं चलता, किन्तु यदि संख्या अधिक है और सत्तारूढ़ व्यक्तियों का ध्यान आकर्षित करने हेतु पर्याप्त है तो आन्दोलन में स्थिरता आ जाएगी और युवाओं में समर्पण एवं जोश की भावना भी उत्पन्न हो जाएगी ।

छात्रों की भावनाएं, रोष एवं पूर्वाग्रह भी उत्तेजनापूर्ण आन्दोलनों को प्रेरणा प्रदान करते हैं । क्या विद्यार्थी अध्यापकों के विरूद्ध नारेबाजी करेंगे ? स्कूलों अथवा विश्वविद्यालयों की सम्पत्ति को नष्ट करेंगे ? क्या वे प्रधानाचार्य या कुलपति को कोई नुकसान पहुँचाएंगे ? क्या वे असामाजिक तत्वों से सहायता लेंगे ? क्या वे दमनकारी साधनों से जनता से चंदा लेंगे आदि ? इन सबका निर्णय युवाओं के नैतिक विचारों अथवा मूल्यों एवं लोकाचार पर निर्भर करता है । इसके अतिरिक्त उत्तेजनापूर्ण आन्दोलनों को बाइय नियन्त्रणों के कारण कुछ सीमाओं का सामना करना पड़ता है ।

1960 की विश्वविद्यालय अनुदान आयोत्ने समिति ने विद्यार्थियों के उत्तेजनापूर्ण आन्दोलनों के यह कारण बताये थे, (1) शुल्क कम करना, छात्रवृत्ति बढ़ाना आदि जैसे

आर्थिक कारण, (2) प्रवेश, परीक्षाओं और अध्यापन के चालू प्रतिमानों में परिवर्तनों की मांग करना, (3) महाविद्यालयों और विश्वविद्यालयों में ठीक से काम नहीं होना, जैसे प्रयोगशालाओं हेतु रसायनों और उपकरणों या पुस्तकालयों के लिए पुस्तकें और पत्रिकाओं की खरीद नहीं करना, (4) विद्यार्थियों एवं अध्यापकों के बीच टकराव के संबंध, (5) प्रांगण में अपर्याप्त सुविधाएं, जैसे अपर्याप्त छात्रावासों, छात्रावासों में खराब भोजन, थैन्टोन का न होना और पेयजल की सुविधाओं का अभाव और)6) युवा नेताओं का राजनीतिज्ञों द्वारा भड़काया जाना ।

इनके अतिरिक्त युवा आन्दोलनों के अन्य कारण भी हैं । सबसे प्रमुख कारण है- वक घोर अन्याय से पीडित होते हैं । युवाओं में व्याप्त पर्याप्त असन्तोष । ऐसे क्रुद्ध यु स्वाधीनता के पश्चात् भारत में युवाओं ने भ्रष्टाचार, असमानता, शोषण, राजनीतिक सात - गांठ, पुलिस की ओर नृशंसता, धार्मिक कट्टरवाद, प्रशासनिक निर्दयता आदि शोषण बिना किसी सामाजिक विरोध के सहन किया है ।

वस्तुतअसन्तोष उतेजनापूर्ण आन्दोलनों के लिए आग में तेल का इतना व्यापक : वे ही युवक इन आन :काम करता है । प्राय्दोलनो मे भाग लेते हैं जो अप्रसन्न हैं, कुण्ठित हैं जिनके जीवन में धन एवं पूर्ति का अभाव होता है, जो अपने लक्ष्यो एवं उद्देश्यों को प्राप्त नहीं कर पाते, तुलनात्मक दृष्टि से जो अपने को कम प्रतिभाशाली महसूस करते हैं अवसरों का अभाव, बेरोजगारी, जाति पर आधारित स्मरक्षण, उच्च शिक्षा की सीमाएं और प्रायऐसे युवक जिनमें बहुमूल्य वस्तुओं को पाने की लालसा होती है :, परन्तु उन्हें यह नहीं मालूम होता कि इन चीजों को प्राप्त करने हेतु क्या कुछ नहीं करना पड़ता ।

ये सब कारण ऐसे हैं जिनसे युवक अत्यधिक दुखी हो जाते हैं फलस्वरूप छात्र असन्तोष एव युवा नेतृत्च का उतेजनापूर्ण आन्दोलनों एव आन्दोलनों की तीव्रता और दिशा पर भारी असर पड़ता है । युवा नेता के प्रमुख कार्य हैं; प्रथम, अपने समूह के सदस्यों के साथ उत्तरदायी, विश्वसनीय और भद्र संबंध स्थापित करना । वह उनकी भावनाओं को समझता है और उनकी भाषा बोलता है । द्वितीय, सदस्यो के साथ उनकी समस्याओं और शिकायतों का जोशीला तकाजा करके एक भावात्मक घनिष्ठता स्थापित करना ।

वह उन्हें एक उद्देश्य से दूसरे उद्देश्य की ओर अपनी गतिविधि करने के लिए प्रेरित करता है । तृतीय, लक्ष्यों की प्राप्ति के लिए कार्यवाही का सुझाव देना । यह

प्रदर्शन., रास्ता रोको घेराव, हड़ताल, और कक्षाओं के बहिष्कार का रूप धारण कर सकता है ।

यह कार्य केवल उन्हीं युवा नेताओं द्वारा सफलतापूर्वक किये जा सकते हैं जिनमें विशेष गुण होते हैं और जिनकी कुछ पृष्ठभूमि होती है । चंचल सरकार)1960) को विभिन्न विश्वविद्यालयों के विद्यार्थी संघों के पदाधिकारियों और नेता बनाने वाले छात्रों के अध्ययन ने यह उद्घाटित किया है कि संघ के नेता प्रमुख रूप से वे हैं; (1) जिसके पास पैसा है, (2) जिनकी ऊँची अकादमिक आकांक्षाएं नहीं हैं, (3) जिनको कुछ राजनैतिक समर्थन प्राप्त है, (4) जो अच्छे वक्ता हैं और)5) जो जोड़ तोड़ कर सकते हैं ।युवाओं के द्वारा किये जाने वाले उत्तेजनापूर्ण आन्दोलनों में पुलिस की भूमिका उस समय प्रारम्भ होती है जब युवा हिंसा एवं दमनकारी प्रवृत्तियों में लिप्त होते हैं, जनसम्पत्ति को नष्ट करते है, प्रशासनिक अधिकारियों का घेराव करते हैं, बंध का आस्वान करते हैं, और दुकानदारों को बाजार बन्द करने के लिए बाध्य करते हैं ।

उपरोक्त सभी परिस्थितियों में युवा उतेजनापूर्ण आन्दोलनी को नियन्त्रित करना अति आवश्यक हो जाता है । इस संदर्भ में हम कुछ सुझाव दे सकते हैं; पहला, एक सामान्य युवा पुरुष प्रायकल्पनाशील :, प्रतिस्पर्द्धी एवं व्यक्तिवादी होता है । उसके जोश एवं उत्साह को नियन्त्रित करने के लिये उनका मार्गदर्शन करना अत्यधिक आवश्यक है ।

युवकों को अपने रोष एवं गुबार को अभिव्यक्त करने की क्षमता उत्पन्न करना सीखाना चाहिए चूंकि यदि वह अपने रोष एवं गुबार को अभिव्यक्त नहीं करते तो उसे निकालने के लिए वह आन्दोलनों का सहारा लेते है । दूसरा, युवाओं एवं छात्रों, मातापिता-, प्राध्यापकों शैक्षणिक प्रशासकों, राजनीतिज्ञों और राजनीतिक दलों को युवाओं की समस्याओ को समझना चाहिए तथा उनकी विभिन्न समस्याओ के उचित समाधान हेतु उन्हें दिशा-निर्देश देने चाहिएं ।

चौथा, शैक्षणिक प्रशासन की प्रक्रिया में छात्रों की भागीदारी की सीमा के प्रश्न पर और उसका स्वरूप क्या हो, शीघ्रातिशीघ्र निर्णय लेना चाहिए । पांचवा, सभी राजनीतिक दलों में छात्रों के राजनीति में भाग लेने के सम्बंध में एक आम आचार संहिता पर सहमति होनी चाहिए । छठा, शैक्षणिक संस्थाओं में पुलिस हस्तक्षेप के सम्बंध में सुस्पष्ट नियम बनाये जाने चाहिएं इत्यादि । यह सभी कुछ उपाय हैं जो युवाओं में व्याप्त असन्तोष एवं आन्दोलन को कम एव नियन्त्रित कर सकते हैं ।

उपसंहार -: निष्कर्षतकहा जा सकता है कि अब वह समय आ गया है कि भारत : देश की इस विशाल युवा शक्ति को जो अभी तक उपेक्षित रही है उचित नेतृत्च एव दर्शन द्वारा विकासात्मक कार्योंमार्ग, सामाजिक एवं राजनैतिक अन्याय एवं शोषण को दूर करने हेतु और राष्ट्रीय सामूहिक लक्ष्यों की प्राप्ति हेतु लगाया जाये ।

उनमें दमन, हिंसा एवं टकराव के स्थान पर आस्था, विश्वास, साहस, धैर्य, सहिष्णुता, त्याग, प्रेम, सद्भाव जैसे गुणो को विकसित किया जाये । आवश्यकता ऐसा वातावरण तैयार करने की है और युवाओं को संगठित करने की । तभी समस्त राष्ट्र का विकास सम्भव है ।

संदर्भ ग्रन्ध -:

1. नेशनल यूथ पॉलिसी 2013

2. अडोलोसेन्ट हेल्थ एंड डेवलोपमेन्ट ,WHO रीजनल ऑफिस साउथ ईस्ट एशिया

3 . योजना ,न्यू दिल्ली 2016

4 .भारतीय युवा , हरीश चंद्र शर्मा ,गायत्री प्रकाशन नई दिल्ली

5 . आन्दोलनो का इतिहास, चित्रा गुप्ता , प्रभा प्रकाशन, पटना